

इकाई-3 : भारतीय शिक्षा: चिंताएँ और मुद्दे
INDIAN EDUCATION : CONCERNS AND ISSUES

संरचना

डॉ.आर.एस.पाण्डेय

- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 उद्देश्य
- 3.3 शालेय शिक्षा का जनतंत्रीकरण/लोकतंत्रीकरण (Democratization of School Education)
- 3.4 शालेय शिक्षा का लोकव्यापीकरण (Universalization of School Education)
 - पहुँच (Access)
 - नामांकन (Enrolment)
 - ठहराव (Retention)
 - सफलता (Success)
- 3.5 शैक्षिक अवसरों की समानता (Equalization of Educational Opportunities)
- 3.6 शालेय शिक्षा में बढ़ती असमानता (Growing Inequalities in Schooling)
- 3.7 शालेय शिक्षा में समाजशास्त्रीय विश्लेषण और गुणवत्ता एवं समता (Sociological Analysis and Quality and Equity in Schooling)
- 3.8 सारांश
- 3.9 अभ्यास कार्य
- 3.10 चर्चा के बिन्दु
- 3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 3.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

शिक्षा, राष्ट्रीय जीवन एवं संस्कृति से विकसित होती है और ये ही उसको समृद्ध बनाते हैं। प्रत्येक राष्ट्र के जीवन में प्रारंभिक शिक्षा-प्रथम प्राथमिकता की वस्तु है। यह पहली सीढ़ी है, जिसे सफलतापूर्वक पार करके ही कोई राष्ट्र अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचता है। राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ सम्बन्ध प्रारंभिक शिक्षा का है, उतना माध्यमिक या उच्च शिक्षा का नहीं है। राष्ट्रीय विचारधारा एवं चरित्र का निर्माण करने में जितना महत्वपूर्ण स्थान इसका है, उतना किसी दूसरी सामाजिक, राजनीतिक या शैक्षणिक गतिविधि का नहीं है। इसका सम्बन्ध किसी विशेष व्यक्ति या वर्ग से न होकर, देश की पूरी जनसंख्या से होता है। इसका हर कदम पर हर व्यक्ति के जीवन से सम्पर्क होता है और बालक ही बड़ा होकर, व्यक्ति का रूप धारण करता है। और परिवार तथा समाज का एक जिम्मेदार व्यक्ति बनता है।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि सब बालकों एवं बालिकाओं की शिक्षा ही राष्ट्रीय प्रगति का मूलधार है। प्रस्तुत इकाई में भारतीय शिक्षा: चिंताएँ और मुद्दे के अंतर्गत शिक्षा का जनतंत्रीकरण, लोकव्यापीकरण, शैक्षिक अवसरों की समानता व असमानता तथा शालेय शिक्षा में समाजशास्त्रीय विश्लेषण के साथ गुणवत्ता एवं समता का उल्लेख किया गया है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- 1) शालेय शिक्षा के जनतंत्रीकरण के बारे में समझ सकेंगे।
- 2) शालेय शिक्षा के लोकतंत्रीकरण की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- 3) शैक्षिक अवसरों की समानता के संबंध में समझ सकेंगे।
- 4) शैक्षिक अवसरों की समानता एवं असमानता में अन्तर कर सकेंगे।
- 5) शालेय शिक्षा में गुणवत्ता एवं समता का समाजशास्त्रीय विश्लेषण कर सकेंगे।

3.3 शालेय शिक्षा का जनतंत्रीकरण/लोकतंत्रीकरण

अरस्तु के समय से लेकर आज तक साधारणतया शासन व्यवस्था के तीन रूप प्रचलित रहे हैं—राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र और लोकतन्त्र। लम्बे समय तक लोकतन्त्र का तात्पर्य एक प्रकार से ही लिया जाता था। लोकतन्त्र शासन का वह रूप है जिसमें जनता का, जनता के द्वारा और जनता के लिए शासन हो।

Democracy is a government of People, by the people and for the people.

Abraham Lincoln

बीसवीं सदी के लोकतन्त्र से तात्पर्य एक राजनीतिक जीवन के उस मार्ग की खोज है, जिसमें मनुष्यों की स्वतन्त्र और ऐच्छिक वृद्धि के आधार पर उनमें अनुरूपता और एकीकरण लाया जा सके।

- **जनतन्त्रीय शिक्षा का महत्व (Importance of Democratic Education)**

जनतन्त्र की सफलता का मुख्य आधार शिक्षा है। यदि देश की अधिकांश जनता अशिक्षित या निरक्षर है, तो ऐसी दशा में जनतन्त्र की सफलता पर सन्देह किया जा सकता है। इस कारण ही संसार के प्रमुख जनतान्त्रिक देशों में सर्वसाधारण में शिक्षा-प्रसार की ओर ध्यान दिया जाता है। वास्तव में शिक्षित नागरिक ही शासन तथा राजनीति के उत्तरदायित्व को वहन कर सकता है। जनतन्त्रात्मक देशों में मतदान का अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्राप्त है। इस अधिकार के द्वारा ही वह प्रत्यक्ष रूप से शासन में भाग लेता है। शिक्षित नागरिक ही मतदान का उपयोग ठीक ढंग से कर सकता है।

शिक्षा प्रत्येक नागरिक को इस योग्य बनाती है जिससे वह उत्तरदायित्वपूर्ण ढंग से शासन में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से भाग ले सकें। वह नागरिकों के चरित्र का उत्थान करती है और उनमें प्रेम और उत्साह की भावना का संचार करती है। राजनीतिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करती है। जनतन्त्र के शिक्षा के अभाव में असफल होने की पूर्ण सम्भावना रहती है तथा जनतन्त्र के दोष उभर कर सामने आ जाते हैं।

- **जनतन्त्रीय शिक्षा का स्वरूप**

जनतन्त्र में शिक्षा को स्वरूप पर जॉन डीवी लिखते हैं कि “जनतन्त्र में इस प्रकार की शिक्षा होनी चाहिए, जिससे व्यक्तियों में सामाजिक सम्बन्ध और नियन्त्रण में व्यक्तिगत रुचि उत्पन्न हो जाये और उनमें ऐसी मानसिक आदतों का निर्माण हो जिनसे अव्यवस्था उत्पन्न हुए बिना सामाजिक परिवर्तन का होना सम्भव हो।” यथार्थ में जनतन्त्र शिक्षा का मुख्य कार्य जनतन्त्र की सुरक्षा करना, उसे बल प्रदान करना तथा जनतान्त्रिक वातावरण उत्पन्न करना है। संक्षेप में, जनतन्त्रात्मक देश में शिक्षा का स्वरूप भी जनतन्त्रीय होना चाहिए।

- **जनतन्त्रीय शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Democratic Education)**

जनतन्त्रीय शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

1. **सर्वसाधारण के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना** — जनतन्त्रात्मक राज्य में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र की सर्वसाधारण जनता को साक्षर बनाने के लिए शिक्षा का समुचित प्रबन्ध करना है। जनतन्त्र जनता का शासन होता है। अतः यह आवश्यक है कि राज्य द्वारा सर्वसाधारण जनता की शिक्षा की पूर्ण तथा उचित व्यवस्था की जाय।
2. **जनतन्त्रात्मक नागरिकता की भावना का विकास** — जनतन्त्रीय शिक्षा का अन्य योगदान इस प्रकार की शिक्षा प्रदान करना है, जो नागरिकों में जनतन्त्रीय नागरिकता की भावना का विकास कर सके। योग्य, सच्चे तथा ईमानदार एवं कार्यकुशल नागरिकों के ऊपर ही जनतन्त्र का भविष्य निर्भर है।
3. **सामाजिकता की भावना का विकास** — मनुष्य सामाजिक प्राणी है। जनतन्त्रात्मक समाज पूर्णतया सहयोग तथा प्रेम पर आधारित रहता है। अतः यह आवश्यक है कि व्यक्ति के दृष्टिकोण को शिक्षा द्वारा यथासम्भव सामाजिक बनाया जाय।
4. **बहुमुखी विकास करना** — जनतन्त्रिक शिक्षा का उद्देश्य बालक का एकांगी विकास न कर बहुमुखी विकास करना होना चाहिए। उसे केवल पुस्तकीय शिक्षा ही नहीं प्रदान करनी चाहिए। शिक्षा की व्यवस्था इस प्रकार की जाये जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक कलात्मक और तकनीकी विकास हो सके।

5. **व्यावसायिक कुशलता का विकास** — आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर रहने वाला नागरिक मत का उचित प्रयोग बिना लोभ-लालच व भय के कर सकता है, अतः शिक्षा का संगठन इस प्रकार किया जाय जिससे वे शिक्षा समाप्ति के पश्चात् किसी व्यवसाय में लग सकें। पाठ्यक्रम में नकनीकी और व्यावसायिक विषयों को भी स्थान दिया जाय। व्यावसायिक कुशलता ही आर्थिक कुशलता की जनक होती है।
6. **नेतृत्व का विकास** — जनतन्त्र की सफलता बहुत कुछ कुशल तथा प्रतिभावान नेतृत्व के ऊपर निर्भर है। आज का छात्र कल देश के शासन की बागडोर हाथ में लेगा। अतः यह आवश्यक है कि छात्रों को नेतृत्व का भी प्रशिक्षण दिया जाय।
7. **अच्छी आदतों का निर्माण** — जनतन्त्रीय समाज के नागरिकों में उत्तम आदतों का निर्माण परम आवश्यक है। अच्छी आदतें ही नागरिकों को परिश्रमी, कार्यकुशल सच्चरित्र तथा अनुशासित बनाती हैं। अतः प्रारम्भ से ही बालकों को अच्छी आदतों का अभ्यस्त बनाया जाय।
8. **कुशलताओं का सृजन** — कुशल और योग्य नागरिक ही देश के आर्थिक विकास में अपना योग दे सकते हैं। ऐसी दशा में जनतन्त्रीय शिक्षा का उद्देश्य बालकों में कुशलताओं का निर्माण तथा विकास होना चाहिए।
9. **व्यक्ति की रुचियों का विकास** — जनतन्त्रात्मक शिक्षा का अन्य उद्देश्य व्यक्ति की विभिन्न रुचियों का उचित दिशा में विकास करना है। श्रेष्ठ रुचियाँ, व्यक्ति को श्रेष्ठ नागरिक बनाती हैं। अतः शिक्षा का आयोजन इस ढंग से किया जाय, जिससे बालकों की विभिन्न रुचियाँ ठीक प्रकार से उचित दिशा में विकसित हो सकें।

अतः “जनतन्त्र की सफलता के लिए विद्यालयों में पूर्ण रूप से जनतन्त्रीय वातावरण निर्मित किया जाना चाहिए। इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न करने के लिए प्रेम, सहयोग, सहानुभूति परोपकार आदि गुणों पर विशेष रूप से बल दिया जाय। दूसरे, विद्यालय के द्वारा बिना भेदभाव के समस्त वर्गों के लिए खुले रहें। तीसरे, विद्यालय का सम्बन्ध समाज से होना चाहिए। पाठ्यक्रम का निर्माण इस ढंग से किया जाय, जिससे समाज की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकें। चौथे, समाज को विद्यालय के निकट लाने के लिए विद्यालय का पुस्तकालय, वाचनालय तथा क्रीड़ा-स्थल आदि समाज के अन्य सदस्यों को उपयोग के लिए दिया जाय। पाँचवें, विद्यालयों को समाज के नवनिर्माण में भी योग देना चाहिए। इसके लिए विद्यालयों को छात्र-छात्राओं के दृष्टिकोण को प्रगतिशील बनाने के साधन जुटाने चाहिए।

● जनतन्त्र में शिक्षक का स्थान

शिक्षा आदान-प्रदान की प्रक्रिया में शिक्षक का प्रमुख स्थान है। जनतन्त्रात्मक राष्ट्र में तो उसका महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। शिक्षक को अपने छात्रों के मध्य अपना स्थान एक मित्र, पथ-प्रदर्शक तक समाज सुधारक के रूप में बनाना चाहिए। उसे यह ध्यान में रखना चाहिए कि उसका कर्तव्य पाठ्यक्रम की पूर्ति करना मात्र ही नहीं, वरन् छात्रों में सच्ची नागरिकता, सामाजिकता तथा सच्चरित्रता का भी विकास करना है। यह कार्य तभी पूरा हो सकता है जब उसका प्रशिक्षण जनतन्त्रीय आदर्शों के अनुरूप हुआ हो तथा वह सच्चरित्रता की भावनाओं से ओत-प्रोत हो। अन्य शब्दों में, शिक्षक को स्वयं जनतन्त्रीय तथा सामाजिकता की भावनाओं से ओत-प्रोत होना चाहिए। उसका व्यवहार छात्रों के प्रति नम्र, सहानुभूतिपूर्ण मित्रवत् तथा भाई-चारे का होना चाहिए।

- **जनतान्त्रिक व्यवस्था में शिक्षा का योगदान**

जनतान्त्रिक व्यवस्था में शिक्षा निम्नानुसार महत्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत करती है।

1. **व्यावहारिक आदर्शों का निर्धारण** – जनतान्त्रिक व्यवस्था के लिए यह आवश्यक है कि समाज में ऐसे आदर्शों पर बल दिया जाय जो व्यावहारिक हों। उस समय सामाजिक व्यवस्था दुर्बल होने लगती है, जब आदर्शों का पालन नहीं किया जाता, केवल उनकी चर्चा होती है। इसीलिए सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने का एक उपाय है— व्यावहारिक आदर्शों का निर्धारण।
2. **वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास** – सामाजिक व्यवस्था का सुचारु रूप से संचालन भी एक उपाय है, जो लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करता है। जब समाज के सदस्य अन्ध-विश्वास से ग्रस्त हो जाते हैं, तो वे ऐसी बातों में विश्वास करने लगते हैं। जिनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है, तब सामाजिक व्यवस्था बिगड़ने लगती है। इसलिए इस बात पर बल दिया गया है कि शिक्षा के द्वारा उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का वांछनीय एवं समुचित विकास किया जाय।
3. **आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि** – जब किसी समाज में आर्थिक सम्पन्नता का अभाव होता है और लोग गरीबी तथा बेकारी से पीड़ित होते हैं, तब सामाजिक अव्यवस्था होना स्वाभाविक है। गरीब और बेकार लोग किसी न किसी प्रकार जिन्दगी बिताने की कोशिश करते हैं, लेकिन उन्हें बहुत कम सफलता मिलती है। आजकल जो तरह-तरह के नारे सुनाई पड़ते हैं, उनके मूल में आर्थिक सम्पन्नता की कमी है। जनतन्त्र में समाजवाद का नारा इस बात पर बल देता है कि समाज के सभी वर्गों को प्रगति के समान अवसर प्राप्त हों। सभी लोगों को आवश्यकतानुसार भोजन, वस्त्र तथा रहने के लिए मकान मिल सकें। फलतः सामाजिक, व्यवस्था को बनाये रखने का तीसरा उपाय आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि करना है। दूसरे शब्दों में, सब लोगों के लिए काम और रोजगार की व्यवस्था करना समाज का दायित्व माना गया है। शिक्षा के द्वारा व्यक्तियों में वह व्यावसायिक कुशलता उत्पन्न की जा सकती है, जो समाज की आर्थिक सम्पन्न में सहायक होती है।
4. **सामाजिक नियन्त्रण की शिक्षा** – सामाजिक व्यवस्था के सन्तोषजनक संचालन के लिए सामाजिक नियन्त्रण की शिक्षा निरन्तर होनी चाहिए, हमें यह ज्ञात है कि सामाजिक आदर्शों तथा मूल्यों के प्रति वांछनीय भावनाएँ होती हैं। इन वांछनीय भावनाओं को उत्पन्न करना शिक्षा का कार्य है। पाठ्यक्रम में इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि सामाजिक दृष्टि से वांछनीय नियमों के प्रति सभी लोगों के मन में अनुकूल भावनाएँ हों।
5. **बेकारी समाप्त करना** – आजकल भारत में शिक्षित बेकारों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। शिक्षित बेरोजगार युवक बेकारी से ऊबकर हिंसा का मार्ग अपना रहे हैं। वे ऐसे कार्य कर रहे हैं, जो समाज और राष्ट्र के लिए अपमानजनक एवं हानिकारक हैं। अतः यह आवश्यक है कि बेकारी समाप्त करने के लिए प्रभावकारी कदम उठाये जायें।
6. **जन्म-दर पर रोक** – इन दिनों भारत में जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है, इसके लिए परिवार नियोजन का आन्दोलन चलाया जा रहा है। अच्छी सामाजिक व्यवस्था में सभी सदस्यों के लिए भोजन, वस्त्र और मकान की सन्तोषजनक व्यवस्था होती है, लेकिन जब जन्म-दर में तीव्र गति से वृद्धि होती है, तब यह सम्भव नहीं होता। इसलिए जन्म-दर पर रोक लगाना अत्यन्त आवश्यक है।
7. **कर्म पर आधारित सामाजिक ढाँचा** – जब व्यक्ति को जन्म, जाति अथवा आर्थिक सम्पन्नता के आधार पर ऊँचा पद न देकर कर्म के आधार पर सामाजिक सम्मान प्रदान किया जाता है, तब सामाजिक व्यवस्था भली-भाँति बनी रहती है। आधुनिक युग में उसी देश की सामाजिक व्यवस्था

अच्छी मानी जाती है जिसमें कि सभी लोग अपनी योग्यता और शक्ति के अनुसार कार्य कर प्रतिष्ठा पाते हैं, इसलिए सामाजिक ढाँचे को कर्म पर आधारित किया जाना चाहिए।

8. **अपराधियों को सुधारना** – समाज में कुछ ही लोग ऐसे होते हैं, जो अपनी आन्तरिक दुर्बलता के कारण समाज विरोधी कार्य करने लगते हैं। वैसे तो कानून बना हुआ है कि जो अपराध करे उसे दण्ड दिया जाय, लेकिन सामाजिक दृष्टिकोण इस बात पर बल देता है कि अपराधियों की दशा को सुधारने के लिए सभी प्रकार के उपाय काम में लाने चाहिए।
9. **सामाजिक सुरक्षा के उपाय ढूँढना** – सामाजिक सुरक्षा समाज में उस समय होती है जबकि सभी वर्गों के लोग अपनी इच्छा और विश्वास के अनुसार कार्य कर सकते हों। प्रत्येक प्रकार के वर्ग भेद को समाप्त किया जाय, जितने भी अनैतिक कार्य हैं उन्हें रोका जाय।
10. **भ्रष्टाचार को रोकना** – भ्रष्टाचार रोकने का सबसे अच्छा उपाय, है कि लोग भली-भाँति यह समझ लें कि गलत तरीके से काम करना अनैतिक और समाज की दृष्टि से निन्दनीय है और स्वयं के लिए घातक भी।
11. **शिक्षा पद्धति में आवश्यकतानुसार परिवर्तन** – शिक्षा के द्वारा सामाजिक व्यवस्था को सन्तुलित रखा जा सकता है, लेकिन कभी-कभी यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षा प्रणाली में ऐसे परिवर्तन किये जायें, जो कि सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। अतः शिक्षा पद्धति में आवश्यकतानुसार परिवर्तन सामाजिक व्यवस्था को चुस्त बनाये रखने का एक महत्वपूर्ण उपाय है।
12. **सांस्कृतिक विलम्बना के दूर करना** – समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से सांस्कृतिक विलम्बना उस समय उपस्थित होती है, जब लोगों के कार्यों और विचारों में मेल नहीं होता। आज ऐसे साधन उपलब्ध हैं, जो गरीबी, बीमारी एवं बेकारी को मिटा सकें। अतः सामाजिक व्यवस्था को दृरुस्त बनाये रखने के लिए सांस्कृतिक विलम्बना को दूर रखा जाय और इसे उत्पन्न होने का अवसर नहीं दिया जाय।

बोध प्रश्न:

1. जनतंत्र का क्या अभिप्राय है?

2. जनतंत्र में शिक्षा के स्वरूप पर जॉनडीवी का क्या कथन है?

3. बालक के बहुमुखी विकास के लिए शिक्षा की व्यवस्था किस प्रकार की जानी चाहिए?

4. जनतांत्रिक व्यवस्था में व्यवहारिक अदर्शों का निर्धारण कैसे किया जा सकता है?

3.4 शालेय शिक्षा का लोकव्यापीकरण (Universalization of School Education)

शिक्षा का जन-जन तक प्रचार एवं प्रसार करना ही शिक्षा का लोकव्यापीकरण है। भारत जैसे जनतान्त्रिक राष्ट्र में शिक्षा के लोकव्यापीकरण का महत्व और भी अधिक है क्योंकि शिक्षा ही सफल जनतंत्र का ठोस आधार तैयार करती है।

शिक्षा का लोकव्यापीकरण – लोकतंत्र के सफल संचालन के लिये शिक्षित तथा प्रबुद्ध नागरिकों की आवश्यकता है। लोकतंत्रीय देशों में प्रत्येक व्यक्ति को प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करना

अनिवार्य माना गया है। जब भारत 1947 में स्वतंत्र हुआ तब उसकी जनसंख्या का 85 प्रतिशत भाग निरक्षर था और 6-11 आयु वर्ग के केवल 31 प्रतिशत बच्चे विद्यालयों में थे। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए संविधान निर्माताओं ने संविधान में यह प्रावधान किया कि राज्य को 14 वर्ष तक के सभी बच्चों की निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने का प्रयास करना चाहिये और इसकी पूर्ति 1960 तक हो जानी चाहिये। परन्तु इसमें पर्याप्त साधनों की कमी, जनसंख्या में भारी वृद्धि, लड़कियों की शिक्षा में रुकावटें, पिछड़े वर्गों के बच्चों की बहुसंख्या, लोगों की सामान्य गरीबी और माता-पिता की निरक्षरता और उदासीनता जैसी कठिनाइयों एवं बाधाओं के कारण संविधान के निर्देश की पूर्ति आज तक नहीं हो पाई। चारों ओर से निर्देश की पूर्ति की मांग होती रही है। यह मांग सामाजिक न्याय तथा लोकतंत्र दोनों ही दृष्टियों से आवश्यक है। अतः आज हर बच्चे के लिये निःशुल्क तथा सार्वजनिक शिक्षा सबसे अग्रता वाला शैक्षिक लक्ष्य है।

शिक्षा के लोकव्यापीकरण की अवधारणा: लोकव्यापीकरण का अभिप्राय समाज के सभी वर्गों के लिये जन-जन तक शिक्षा की पहुंच सुनिश्चित करना है। प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण हेतु चार बातों का होना आवश्यक है-

- **पहुंच Access** - राज्य के निधारित मापदण्ड के अनुसार प्रत्येक बसाहट में एक किलोमीटर की परिधि में प्राथमिक शिक्षा की सुविधा तथा प्रत्येक बसाहट को तीन किलोमीटर की परिधि में माध्यमिक शिक्षा की सुविधा उपलब्ध कराना।
- **नामांकन (Enrolment)** - समस्त छः से चौदह वर्ष के बच्चों को शालाओं में दर्ज कराना।
- **ठहराव Retention** - दर्ज बच्चों को शालाओं में वर्षभर नियमित उपस्थिति।
- **सफलता Success** - शालाओं में दर्ज एवं नियमित उपस्थित बच्चों के शैक्षिक उपलब्धि में गुणवत्ता युक्त वृद्धि करना। अर्थात्-

शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिये हमें निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है-

(अ) विद्यालयी सुविधाओं को लोकव्यापी बनाना।

(ब) नामांकन को लोकव्यापी बनाना।

(स) छात्रों की निर्धारित अवधि तक स्कूल में रखना।

(द) शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार।

(अ) **विद्यालयी सुविधाओं को लोकव्यापी बनाना-** सन् 1950 से इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये गये हैं। परन्तु जनसंख्या के विस्फोट ने समस्त प्रायासों एवं उपलब्धियों को अर्थहीन बना दिया है। सीमित साधनों के कारण हम जनसंख्या वृद्धि गति के साथ विद्यालयी सुविधाओं को प्रदान करने में असमर्थ रहे। 1981 की जनगणना के अनुसार भारत, में 5,57,117 पूर्ण रूप से बसे तथा 48,107 अर्द्ध बसे ग्राम थे। इसमें से 3,18,611 ग्राम ऐसे हैं जिनकी

जनसंख्या 500 से कम है। अखिल भारतीय द्वितीय शैक्षिक सर्वेक्षण के अनुसार 2,40,048 ग्रामों में प्राथमिक विद्यालय नहीं थे। इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते हैं कि शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिये अभी हमें देश के सुदूरतम भागों में प्राथमिक विद्यालयों (मिडिल या जूनियर हाईस्कूलों) की व्यवस्था करना है। साथ ही उन छात्रों के लिए भी विद्यालयी सुविधाओं की व्यवस्था करनी है जो शाला-त्यागी (drop-out) है। लड़कियों के लिए भी पृथक् विद्यालयों की व्यवस्था करनी है, क्योंकि बहुत से क्षेत्रों की सामाजिक परम्पराएँ उनको लड़कों के साथ अध्ययन करने की अनुमति नहीं देती है। फिर भी आज की स्थिति में विद्यालयों तक पहुंच को काफी हद तक लोकव्यापी कर लिया गया है। सर्वशिक्षा अभियान एवं आर.टी.ई. - 2009 के अन्तर्गत विद्यालयीन सुविधाओं का लोकव्यापीकरण किया जा रहा है।

(ब) नामांकन को लोकव्यापी बनाना - शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिये सभी क्षेत्रों के बच्चों के लिये विद्यालयी सुविधाएँ प्रदान कर देना ही आवश्यक नहीं है वरन् इसके साथ-साथ नामांकनों की संख्या बढ़ाने का प्रयास भी करना आवश्यक है। नामांकन का लोकव्यापीकरण न होने का प्रमुख कारण बच्चों की आर्थिक दशा का खराब होना है। जो अपने माता-पिता की जीतिकोपार्जन में सहायता करते हैं। वे विद्यालय जाने की बजाय अपने परिवार की आय की पूर्ति के लिये खेतों, दुकानों तथा कारखानों में काम करते हैं। लड़कियाँ जीविकोपार्जन में प्रत्यक्ष रूप से सहायता न देकर घर के कामकाज तथा छोटे-भाई-बहिनों की देखभाल करती हैं। ऐसे बच्चे विद्यालय जाने में असमर्थ रहते हैं क्योंकि इनको परिवार की दृष्टि से किसी न किसी कार्य के लिये आवश्यक समझा जाता है। साथ ही माता-पिता की उदासीनता तथा अप्रासांगिक एवं नीरस विद्यालय पाठ्यक्रम और सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ नामांकन के लोकव्यापीकरण के मार्ग में बहुत बड़ी बाधाएँ हैं।

(स) छात्रों को निर्धारित अवधि तक स्कूल में रखना (ठहराव) - विद्यालय में हर बच्चे का नामांकन करने के बाद यह देखना आवश्यक है कि वह सालभर नियमित रूप से विद्यालय में उपस्थिति रहकर प्रगति करता रहे अर्थात् अवरोध न आने पाये और वह विहित आयु तथा कक्षा तक अपना अध्ययन पूरा किये बिना स्कूल न छोड़े। लोकव्यापीकरण की प्रक्रिया में अपव्यय एवं अवरोध महत्वपूर्ण हैं। आप यह जानकर आश्चर्य चकित हो जायेंगे कि कक्षा 1 में प्रवेश करने वाले 100 बच्चों में से कठिनाई से 40 बच्चे कक्षा 6 पास पर पाते थे और इनमें से 25 बच्चे कक्षा 8 पूरा कर पाते थे। इस प्रकार कक्षा 5 तक 60 प्रतिशत और कक्षा 8 तक 75 प्रतिशत अपव्यय हो जाता था। अवरोधन छात्रों तथा उनके अभिभावकों पर बड़ा ही दूषित प्रभाव डालता था। यह स्वयं में अपव्यय है क्योंकि इससे समय, शक्ति तथा संसाधन पर्याप्त मात्रा में नष्ट को जाते हैं। वर्तमान में सर्वशिक्षा अभियान व आर.टी.ई. -2009 के

कारण अपव्यय एवं अवरोधन में कमी आई है। प्रारम्भिक स्तर पर होने वाले अपव्यय एवं अवरोध के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं:

- (1) छात्रों की आयु-रचना में विषमरूपता,
- (2) कई राज्यों में यह रिवाज चालू है कि नये दाखिले स्कूल सत्र के पहले महीने में न करके पूरे साल करते रहना ;
- (3) उपस्थिति में अनियमितता ;
- (4) विद्यालय में तथा बच्चों के पास शैक्षिक उपकरणों का अभाव;
- (5) कक्षाओं में बहुत ज्यादा भीड़-भाड़ ;
- (6) पुस्तकीय शिक्षा;
- (7) अनुपयुक्त पाठ्यक्रम-यह छात्रों के जीवन तथा उनकी आवश्यकताओं एवं समस्याओं से पूर्ण रूपेण सम्बन्धित नहीं हैं;
- (8) खेल-कूद में पढ़ाने की तकनीकें अपनाने में अध्यापकों की असमर्थता, जो बच्चों को रोचकता के साथ विद्यालय जीवन का अभ्यस्त बनाने में सहायता दे सकती है;
- (9) परीक्षाओं की गलत प्रणाली; जिसे वर्तमान में सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन के द्वारा दूर किया जा रहा है।
- (10) शिक्षक की उदासीनता उसकी अपर्याप्त तैयारी तथा शिक्षण की गलत प्रविधियाँ;
- (11) विद्यालय आनन्दराहित का अस्वस्थ वातावरण। आर.टी.ई. - 2009 में कक्षा का वातावरण में युक्त एवं आनन्ददायी रखने का सतत् प्रयास किया जा रहा है।

(द) शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार - शालाओं में दर्ज एवं नियमित उपस्थित छात्र अपनी-अपनी कक्षाओं के लिए निर्धारित दक्षताओं का न्यूनतम अधिगम स्तर प्राप्त करे तथा उपलब्धि स्तर में गुणात्मक सुधार हो। अतः सभी स्तर की शिक्षा की गुणवत्ता में उन्नयन का प्रयास किया जाना होगा। एक ऐसी शिक्षा गुणवत्ता विकसित करनी होगी जो श्रम के महत्व को आत्मसात करने में सहायक हो, जो सम्प्रेषण क्षमता में वृद्धि करती हो, जो सामाजिक व राष्ट्रीय उत्तरदायित्व की भावना बढ़ाती हो, जो आर्थिक विकास में सहायक हो, जो विश्वबन्धुत्व का भाव उत्पन्न करती हो, जो आत्मविश्वास व गौरव की अनुभूति कराती हो तथा जो विघटनकारी शक्तियों का सामना करने के लिए तैयार करती हो।

- **लोकव्यापीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के उपाय** - शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए राज्यों की योजनाओं में महत्वपूर्ण कदम उठाने के लिए विभिन्न उपायों का सुझाव दिया गया। इनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं:

- (1) मौजूदा सुविधाओं के प्रयोग का विस्तार करना जिनमें विद्यालय में पढ़ाई के घण्टों का समायोजन सम्मिलित है जो स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार एक दिन में 3-4 घण्टे से अधिक न हों। आर.टी.ई. 2009 के अन्तर्गत शिक्षकों के लिए सप्ताह में 4-5 घण्टे कार्य करने का प्रावधान किया गया है।
- (2) नई विद्यालयी सुविधाओं की व्यवस्था जो आर्थिक रूप से व्यवहार्य तथा शैक्षिक रूप सुसंगत हो।
- (3) नामांकन के लोकव्यापीकरण के लिये बच्चों को समुचित प्रोत्साहन- जैसे मध्याह्न भोजन, स्कूल की वर्दी, निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें, शिक्षा प्राप्त करने की सभी सामग्री मुफ्त देना और समय की कीमत के एवज में अनुसूचित जातियों के परिवारों की लड़कियों को पर्याप्त छात्रवृत्ति देना आदि।
- (4) हर बच्चे के घर से आसानी से पार करने योग्य बाधारहित दूरी पर विद्यालय की व्यवस्था करना।
- (5) विहित आयु के हर बच्चे का प्रचार द्वारा, समझाकर, प्रोत्साहन के साथ विद्यालयों की कक्षा- 1 में नामांकन कराना।
- (6) 11-14 आयु-वर्ग के सभी बच्चों को जो विद्यालय नहीं जा रहे हैं और जो शिक्षा का प्राथमिक स्तर पूरा करके काम चलाऊ रूप से साक्षर नहीं बन पाये हैं उनको कम से कम एक साल की साक्षरता कक्षाओं में उपस्थित होने के लिए बाध्य करना।
- (7) साक्षरता कक्षाओं के अतिरिक्त उक्त प्रकार के बच्चों के लिये अशंकालिक शिक्षा की व्यवस्था करना। इस अशंकालिक शिक्षा का पाठ्यक्रम लचीला हो। इसका निर्धारण बच्चों की आवश्यकताओं एवं उनके दृष्टिकोणों के अनुकूल स्वरोजगारमूलक करना होगा।
- (8) प्रारम्भ में अशंकालिक शिक्षा में उपस्थिति को स्वैच्छिक रखना। परन्तु धीरे-धीरे इसे बाध्यकर नियमित उपस्थिति में बदलना होगा।
- (9) कक्षा 8 तक के लिये गुणवत्ता पर सतत् व्यापक मूल्यांकन की नीति को अपनाकर। आर. टी.ई. 2009 में किसी भी छात्र को आठवीं तक किसी भी कक्षा में न रोकने की मनाही है। किसी भी छात्र को परीक्षा की असफलता के आधार पर न रोकना।
- (10) औपचारिक विद्यालयों में बहु-बिन्दु प्रवेश (Multiple-pointentry) नीति को अपनाना।
- (11) कक्षा 1 तथा 2 में खेल-विधियों को अपनाना। क्रियाविधि आधारित शिक्षण को अपनाना।
- (12) प्राथमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम को उन्नत बनाना। इसके लिये इसमें समाज उपयोगी उत्पादक कार्य (Socially Useful Productive Work) को स्थान दिया जाय। सम्पूर्ण देश

में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) द्वारा निर्मित पाठ्यक्रम को लागू किया जाय।

उपर्युक्त जिन उपायों को बताया गया है वे औपचारिक शिक्षा के माध्यम से शिक्षा के लोकव्यापीकरण से संबंधित हैं। परन्तु ऐसे बहुत से बालक हैं जो विद्यालयों से बाहर हैं और वे विद्यालयों में पुनः प्रवेश नहीं ले सकते हैं। लेकिन इन लोगों के लिये भी निर्धारित शिक्षा का होना आवश्यक है। ऐसे बच्चों के लिये अनौपचारिकेतर शिक्षा (Non-formal Education) पर विचार किया जाय। सम्पूर्ण देश में अनौपचारिकेतर शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जाय। अनौपचारिकेतर शिक्षा निम्नलिखित तीन प्रकार के बच्चों के लिये व्यवस्थित की जाय-

(अ) समाज के निर्बल वर्गों के बच्चों के लिये;

(ब) 6-14 आयु-वर्ग की लड़कियों के लिये;

(स) 6-14 आयु-वर्ग के उन बच्चों (लड़कों व लड़कियों) के लिए जो आर्थिक कार्यों में संलग्न हैं।

देशव्यापी, निरक्षरता तथा औपचारिक विद्यालयों में अपव्यय तथा अवरोधन की भारी मात्रा को देखते हुए साक्षरता को बढ़ाने तथा लोकव्यापीकरण के लिये अनौपचारिकेतर शिक्षा की कई योजनाएँ चालू की गई थी। शिक्षा-आयोग (1964-66) तथा राष्ट्रीय शिक्षा-नीति (1986) के अनुसार अनौपचारिकेतर शिक्षा-व्यवस्था को प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा का अटूट अंग माना गया था। यह निश्चित है कि मात्र औपचारिक शिक्षा-पद्धति के माध्यम से देश के समस्त बच्चों को शिक्षित नहीं किया जा सकता है। इस कारण विद्यालय स्तर पर अनौपचारिकेतर शिक्षा का महत्व और बिन्दु प्रवेश-प्रणाली जैसी व्यवस्थाओं को लागू किया गया। अनेक माध्यमिक शिक्षा-मण्डलों ने काफी समय से पत्राचार द्वारा शिक्षा को सफलतापूर्वक अपनाया है। इस प्रकार अशंकालीन विद्यालय भी स्थापित किये गये जो प्रायः सायंकालीन या फिर दो या तीन पारियों में चलते हैं। बहुबिन्दु प्रवेश-पद्धति अभी केवल प्रयोगात्मक स्तर पर ही है। इस दिशा में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने अनौपचारिक शिक्षा-केन्द्र भूमियादार में प्रारम्भ किया था जिसका अन्य क्षेत्रों तथा राज्यों में विस्तार किया गया था।

अनौपचारिकेतर शिक्षा को आकाशवाणी द्वारा विशेष शैक्षिक कार्यक्रम के माध्यम से लागू किया गया था। साथ ही अब इसके लिये दूरदर्शन का भी प्रयोग किया जाने लगा। विद्यालय-स्तर के लिये महाविद्यालयों, ऐच्छिक संगठनों आदि के द्वारा भी अनौपचारिकेतर शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रम चलाये जाते हैं। एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय, बम्बई, डी.ई.आई. (डीम्ड विश्वविद्यालय) दयालबाग, भारतीय महिला-शिक्षा-परिषद् तथा अन्य संस्थाएँ अशिक्षित तथा कामगर महिलाओं तथा शाला त्यागी बच्चों के लिये अनौपचारिकेतर शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रम संचालित कर रही हैं।

सन् 1985 से संचालित इंदिरागाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू), उच्च शिक्षा के क्षेत्र में एवं राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयीन संस्थान (NIOS) विद्यालयीन शिक्षा के क्षेत्र में दूरस्थ-शिक्षा के माध्यम से जन-जन तक शिक्षा के लोकव्यापीकरण में अहम भूमिका निभा रहे हैं।

बोध प्रश्न:

1. शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए हमें किन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है ?

2. प्रारम्भिक स्तर पर होने वाले अपव्यय एवं अवरोधन के प्रमुख कारण कौन-कौन से हैं ?

3. नामांकन के लोकव्यापीकरण के लिए बच्चों को कौन सा प्रोत्साहन दिया जा रहा है ?

3.5 शैक्षिक अवसरों की समानता (Equalization of Educational Opportunities)

भारतीय गणतंत्र मूलतः जनतंत्र, सामाजिक तथा धर्म-निरपेक्षता के सिद्धान्तों पर आधारित है। समानता इसकी एक महत्वपूर्ण आधार शिला है। जिस प्रकार शिक्षा का लोकव्यापीकरण सामाजिक परिवर्तन हेतु शिक्षा की आधार भूत आवश्यकता है, उसी प्रकार शैक्षिक अवसरों की समानता भी लोगों को सामाजिक गतिशीलता प्रदान कर सामाजिक परिवर्तन की अपरिहार्य आवश्यकता होती है। कोठरी शिक्षा आयोग ने कहा है कि शिक्षा का एक महत्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य अवसर की समानता प्रदान करना है, जिससे पिछड़े तथा दलित वर्ग शिक्षा के द्वारा अपनी स्थिति सुधार सकें।

शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ - शैक्षिक अवसरों की समानता का तात्पर्य जनमानस द्वारा विभिन्न रूपों में लगाया जाता है। 'समानता' (Equality) का तात्पर्य सभी के लिए एक समान शिक्षा नहीं है बल्कि प्रत्येक बालक की शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक, नैतिक परिस्थितियों के अनुरूप शिक्षा को प्रासंगिक बनाना है। साथ ही समानता का तात्पर्य राज्य द्वारा व्यक्तियों की शिक्षा के सन्दर्भ में जाति, रूप, रंग, प्राप्तीयता एवं भाषा, धर्म आदि के मध्य भेदभाव न करने से भी है।

संक्षेप में 'समानता' शब्द से अर्थ उन समान परिस्थितियों से है जिनमें सभी व्यक्तियों को विकास के समान अवसर प्राप्त हो सकें और सामाजिक भेदभाव का अन्त हो सके। इसके साथ ही सामाजिक न्याय (Social Justice) के लक्ष्य की प्राप्ति भी सम्भव हो सके। प्रो. लास्की (Laski) ने लिखा है कि -

“समानता का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाय अथवा सभी को समान वेतन दिया जाय। यदि एक पत्थर ढोने वाले का वेतन एक प्रसिद्ध गणितज्ञ या वैज्ञानिक के समान कर दिया जाय, तो इससे समाज का उद्देश्य ही नष्ट हो जायेगा। अतः समानता का अर्थ यह है कि विशेष अधिकार वाला वर्ग न रहे और सबको उन्नति के समान अवसर मिलें।”

शिक्षा (Education) के क्षेत्र में इस ‘समानता’ की अवधारणा को स्थापित करने के लिए निम्नलिखित प्रयास किये गये हैं-

- 1) एक निश्चित अवधि तक भेदभाव रहित निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।
- 2) माध्यमिक स्तर पर विभिन्नीकृत पाठ्यक्रम व्यवस्था।
- 3) उच्च स्तर पर सभी के लिए अपेक्षित शैक्षिक उन्नति की व्यवस्था ताकि वे उचित योगदान देने में सक्षम हो सकें।

शैक्षिक अवसरों के लिए संवैधानिक प्रावधान

भारत में सन् 1947 से पूर्व तक ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली प्रचलित रही। ब्रिटिशकालीन भारत में संघीय शासन था। सन् 1937 में सात प्रान्तों में कांग्रेस सरकार का गठन हो चुका था। इस समय शिक्षा को नवीन संवैधानिक एवं राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान करने की दिशा में तत्कालीन राष्ट्रीय नेताओं ने कार्य प्रारम्भ किये। इसके परिणामस्वरूप ‘वर्धा योजना’ को कठोर रूप से क्रियान्वित किया गया तथा सार्वभौमिक (Universal) एवं निःशुल्क (Free) शिक्षा का प्रस्ताव किया गया।

किन्तु प्रान्तीय सरकारें अधिक समय तक स्वशासन को स्थापित नहीं कर सकीं। इसका प्रमुख कारण था अंग्रेजों का कपटपूर्ण व्यवहार तथा भारतीयों की स्वराज सम्बन्धी माँग को ठुकरा देना। अन्ततोगत्वा महायुद्ध में मित्र राष्ट्रों के साथ-साथ अंग्रेजों ने पुनः शिक्षा के सन्दर्भ में ‘सार्जेंट प्लान’ (Sergeant Plan) का निर्माण किया। सन् 1945-46 में पुनः अन्तरिम सरकारों की स्थापना हुई जो कि 15 अगस्त 1947 तक कार्यरत रहीं।

इस स्वातन्त्र्योत्तर काल में राष्ट्र के समक्ष पुनः शिक्षा के पुनर्गठन एवं भारतीयकरण की कठिन समस्याएँ उभरने लगीं। तत्कालीन शिक्षा मन्त्रालय ने इन समस्याओं को प्राथमिकता क्रम में हल करने के लिए राष्ट्रीय संविधान एवं वैज्ञानिक रूप से कार्य करना प्रारम्भ किया।

भारतीय संविधान में ऐसी अनेक महत्वपूर्ण धाराएँ एवं उपबन्ध हैं जिनका शिक्षा से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है। इन धाराओं तथा उपबन्धों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत है-

- 1) धारा 28 (1) - “राज्य द्वारा पूर्णतः पोषित किसी शिक्षा-संस्था में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी।”
- 2) धारा 29 (1) - “भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासियों के किसी विभाग को अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति बनाये रखने का अधिकार होगा”

धारा 29 (2) - “राज्य द्वारा पोषित या राज्य-निधि से सहायता प्राप्त करने वाली किसी शिक्षा-संस्था में किसी नागरिक को धर्म, प्रजाति, जाति, भाषा या उनमें से किसी एक के आधार पर प्रवेश देने से नहीं रोका जायेगा।”

- 3) धारा 30 - “धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना तथा प्रशासन का अधिकार होगा।”
- 4) धारा 45 - “राज्य इस संविधान के लागू होने के समय से इस वर्ष के अन्तर्गत सब बच्चों के लिए, जब तक वे चौदह वर्ष की आयु पूर्ण नहीं कर लेंगे, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा।”
- 5) धारा 46 - “राज्य, जनता के निर्बल विभागों विशेषतया अनुसूचित जातियों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।”
- 6) धारा 343 - “देवनागरी लिपि में हिन्दी, संघ की राजभाषा होगी।”
- 7) धारा 350 (अ) - “प्रत्येक राज्य और प्रत्येक स्थानीय पदाधिकारी, भाषाई अल्प-संख्यक वर्गों (Linguistic Minority Groups) के बच्चों को प्राथमिक स्तर पर अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने की पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयास करेगा।”
- 8) धारा 351 - “हिन्दी भाषा की वृद्धि करना, उसका विकास करना तथा उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा जिससे यह भारत की मिश्रित संस्कृति के विभिन्न अंगों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।”

शिक्षा के अवसरों की समानता की आवश्यकता

भारतीय संविधान में नागरिकों के एक समान अधिकारों एवं कर्तव्यों की विशद व्याख्या की गयी है। इनमें से संविधान की धारा 29 (2) के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया है। शिक्षा आयोग (1964-66) ने अपने विचार में व्यक्त किये हैं कि - “जो भी सामाजिक सामाजिक न्याय को अत्यन्त आदर्श मानता है, जन-साधारण की हालत सुधारने तथा समस्त शिक्षा पाने योग्य व्यक्तियों को शिक्षित करने को उत्सुक है, उसे यह व्यवस्था करनी ही होगी कि जनता के सभी वर्गों को अवसर की, अधिकाधिक समता प्राप्त होती जाये। एक समतामूलक तथा मानवतामूलक समाज, जिसमें निर्बल का शोषण कम से कम हो, बनाने का यही एक सुनिश्चित साधन है।”

इसी दिशाबोध से नवीन शिक्षा नीति भी अभिप्रेरित है। नई शिक्षा नीति (1986) में उल्लेखित है कि मैं विषमताओं को दूर करने पर विशेष बल देगी और अब तक वंचित रहे लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के समान अवसर मुहैया करेगी।”

प्रत्येक राष्ट्र का यह नैतिक दायित्व है कि वह बिना किसी भेदभाव के अपने नागरिकों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करे। शिक्षा को सामाजिक यन्त्र के रूप में अवस्थित करने वाले शिक्षाशास्त्रियों की मान्यता है कि जनतान्त्रिक राष्ट्र के लिए तो यह और भी अनिवार्य हो जाती है। वैसे भी विश्व के सभी राष्ट्रों में आज शिक्षा के प्रति अपूर्व जन-जागृति उत्पन्न हो चली है। अब शिक्षा के व्यय को कृषि-उद्योगों के व्ययों के समकक्ष मान्यता प्रदान करते हैं। यही धारणा

अविकसित राष्ट्रों में जनक्रान्ति का स्रोत बन गयी है। इस दशा में कार्य करने का श्रेय अन्तर्राष्ट्रीय विश्व संगठनों जैसे-यू.एन.ओ. (यूनाइटेड नेशन्स ऑर्गनाइजेशन) तथा उसकी प्रमुख सहयोगी शाखा यूनेस्को (UNESCO) यूनाइटेड नेशन्स एजुकेशनल, साइंटिफिक एण्ड कल्चरल ऑर्गनाइजेशन को भी जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ (यू.एन.ओ.) ने विश्व मानवीय अधिकारों के अन्तर्गत निम्नलिखित क्षेत्रों में समानता की अवधारणा को स्वीकारते हुए उद्धृत किया है-

(1) नागरिक अधिकार (Civil Rights) - मानवीय अधिकारों की घोषणा में निम्नलिखित अधिकार विश्व के प्रत्येक नागरिक को प्रदान किये गये हैं-

- 1) सभी प्राणी जन्म से स्वतन्त्र हैं तथा वे आत्म-सम्मान एवं अधिकारों के सन्दर्भ में एक समान हैं।
- 2) प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने का अधिकार है। साथ ही स्वतन्त्र एवं सुरक्षा का भी हकदार है।
- 3) किसी भी व्यक्ति को नौकर या गुलाम बनाकर नहीं रखा जा सकता।
- 4) किसी भी व्यक्ति को यातनापूर्ण, बर्बर दण्ड प्रदान नहीं किया जाये।
- 5) सभी व्यक्ति कानून के समक्ष एक समान हैं तथा उनको कानून को समान रूप से संरक्षण प्रदान करना चाहिये।
- 6) किसी व्यक्ति को मनमाने ढंग से केन्द्र, बन्दी तथा निर्वासित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक व्यक्ति अपने ऊपर लगे आपराधिक दोषों के लिए न्यायालय की शरण लेने के लिए स्वतन्त्र है।
- 7) प्रत्येक व्यक्ति अपने राष्ट्र की सीमा में कहीं भी स्थायी रूप से निवास करने के लिए स्वतन्त्र है।
- 8) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश को छोड़ने का तथा पुनः वापिस लौटने का अधिकार प्राप्त है।
- 9) प्रत्येक व्यक्ति को वैचारिक स्वतन्त्रता, आत्मिक निर्णय की स्वतन्त्रता तथा धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है।
- 10) प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्र अभिव्यक्ति एवं मत प्रदान करने का अधिकार है।

(2) राजनीतिक अधिकार (Political Rights) - संयुक्त राष्ट्रसंगठन (UNO) के मानवीय अधिकारों के अन्तर्गत धारा 14,15,21 में निम्नलिखित राजनीतिक अधिकारों की स्थापना की है -

- प्रत्येक व्यक्ति अपने राष्ट्र की सरकार में सक्रिय सहभागिता कर सकता है।
- प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रदत्त जन-सेवाओं का लाभ प्राप्त करने के लिए समान रूप से अधिकार है।
- किसी भी राष्ट्र में सरकार की स्थापना वहाँ के निवासियों की 'इच्छा शक्ति' पर निर्भर करेगी।

- प्रत्येक व्यक्ति को अपने राष्ट्र की नागरिकता का अधिकार प्राप्त है। किसी भी व्यक्ति को इसके त्यागने या छीनने हेतु बलपूर्वक प्रयास नहीं किया जा सकता है।
- प्रत्येक व्यक्ति को अन्य देशों में शरण ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है।

(3) **आर्थिक अधिकार (Economic Rights)** – आर्थिक रूप से स्वतन्त्रता प्रदान करने के लिए मानवीय अधिकारों की संहिता में धाराएँ-17,22,23,24 तथा 25 का उल्लेख किया गया है। उनका सार, संक्षेप में निम्नवत् है-

- प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सम्पत्ति रखने का अधिकार प्राप्त है। वह स्वयं या किसी अन्य
- प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अधिकार है। साथ ही राष्ट्र को उसकी बेरोजगारी से रक्षा करने का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को समान कार्य हेतु समान वेतन प्राप्त करने का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को उचित मानदण्डों के अनुरूप जीवन-यापन तथा स्वास्थ्यप्रद जीवन जीने का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम एवं मनोरंजन के उपयोग का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकारों की माँग तथा सुरक्षा हेतु ट्रेड यूनियनों की सदस्यता ग्रहण करने का अधिकार है।

(4) **सामाजिक अधिकार (Social Right)** – मानवीय अधिकारों के घोषणा-पत्र में निम्नलिखित सामाजिक अधिकारों का उल्लेख किया गया है-

- राष्ट्रों द्वारा निर्धारित निश्चित आयु वर्ग में प्रत्येक युवक-युवती को पारस्परिक पसन्द से विवाह करके परिवार स्थापित करने का अधिकार है।
- परिवार किसी राष्ट्र एवं समाज की आधारभूत इकाई है। अतः उस राष्ट्र द्वारा उसकी सुरक्षा एवं परिपोषण की व्यवस्था करना अनिवार्य है।
- मातृत्व एवं बाल्यावस्था की देखभाल हेतु विशेष प्रयास करना प्रत्येक राष्ट्र का दायित्व है।
- प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है।
- शिक्षा का आयोजन इस प्रकार से किया जाय कि वह विभिन्न जातियों, धर्मों के व्यक्तियों के मध्य पारस्परिक स्नेह, धैर्य, मित्रता उत्पन्न करने वाली हो।

(5) **सांस्कृतिक अधिकार (Cultural Right)** – मानवीय अधिकारों की घोषणा में निम्नलिखित सांस्कृतिक अधिकारों का समावेश किया गया है -

- 1) प्रत्येक व्यक्ति अपने सामुदायिक क्रिया-कलापों में सहभागिता हेतु स्वतन्त्र है।
- 2) प्रत्येक राष्ट्र के व्यक्ति को अपनी सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण, सम्प्रेषण तथा सुरक्षा का अधिकार है चाहे यह वैज्ञानिक, वस्तुगत या साहित्यिक हो।

यू.एन. डिक्लरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स (U.N. Declaration of Human Rights) ने विश्व के मानव में संवेतना जागृत कर दी जिससे वह मानवीय अधिकारों तथा समानता के अवसरों के प्रति सचेत हो गया। इसकी धारा-1 एवं धारा-2 के अन्तर्गत विस्तार से कहा गया है -
धारा-1 - “सभी व्यक्ति जन्म से स्वतन्त्र हैं अतः वे सम्मानजनक तथा समान अधिकारों के हकदार हैं। वे सभी तर्क एवं चेतना से अभिपूरित हैं तथा उन्हें परस्पर एक-दूसरे के प्रति भाई-चारे की भावना के साथ कार्य करना चाहिए।”

धारा-2 - “प्रत्येक व्यक्ति इस घोषणा में उद्धृत मूल अधिकारों तथा स्वतन्त्रता का हकदार हैं। अतः उन्हें जाति, भाषा, धर्म, रंग, लिंग, राजनीति, मतों द्वारा पृथक्-पृथक् , नहीं किया जा सकता है।”

इस विश्वव्यापी आन्दोलन से भारतीय संविधान भी पूर्णरूपेण प्रभावित है। इसलिए भारत में सभी के लिए अनिवार्य शिक्षा की घोषणा संविधान के क्रियान्वयन के साथ ही 1950 में कर दी गयी थी। इन्हीं समानताओं को लक्ष्य मानकर शिक्षा को राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक प्रगति का समुन्नत मार्ग माना गया है तथा इसकी अबाध प्रगति के लिए, सुव्यवस्थित, सुनिश्चित, समान अवसरों के जुटाया गया है।

बोध प्रश्न:

1. शैक्षिक अवसरों की समानता का क्या अभिप्राय है ?

.....

2. संविधान की धारा- 45 के अंतर्गत क्या प्रावधान किया गया है ?

.....

3. शिक्षा आयोग (1964-1966) के शैक्षिक अवसरों की समानता के संबंध में विचार क्या है ?

.....

4. युनेस्को का पूरा नाम लिखिये ?

.....

5. संयुक्त राष्ट्रीय संगठन के मानविया अधिकारों के अंतर्गत किन धाराओं में राजनीतिक अधिकारों की स्थापना की गई ?

.....

3.6 शालेय शिक्षा में बढ़ती असमानता (Growing inequalities in Schooling)

“शिक्षा की चुनौती नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में अवसरों की असमानताओं, विषमताओं की जटिलताओं का निम्नलिखित रूप में उल्लेख किया गया है-

“बुद्धि, नैतिक, न्याय और घनिष्टता की दृष्टि से शिक्षा की व्यवस्था में बहुत अधिक असमानता है। यद्यपि जनसंख्या का तीन-चौथाई भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है फिर भी उन्हें शिक्षा के लिए बहुत कम संसाधन प्राप्त हो रहे हैं। जबकि समृद्ध लोग शहरों में निजी रूप से चलायी जाने वाली अच्छी शिक्षण संस्थाओं का लाभ लेते हैं तथा ये ही व्यावसायिक शिक्षा संस्थाओं में अनारक्षित स्थानों के बहुत बड़े हिस्से पर अधिकार कर लेते हैं। जबकि ग्रामीण स्कूलों की अपेक्षाकृत दयनीय दशा के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को बहुत बड़ी हानि उठानी पड़ती है।”

इसी प्रपत्र (Document) में लिंग पर आधारित असमानता तथा जातिगत असमानता के बिन्दुओं की विवेचना निम्नलिखित रूप में की है-

“लड़कियों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों ने पिछले दशक के दौरान उल्लेखनीय प्रगति की है। इसके उपरान्त भी शैक्षिक उपलब्धि के अन्तिम सोपान पर हैं। बालिकाएँ तो घर-गृहस्थी के कार्यों में अपनी दक्षिणता तथा सामाजिक कुरीतियों की शिकार होती हैं, जबकि अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चे ऐसी अयोग्यताओं, जो स्थानों के आरक्षण से नहीं दूर की जा सकती हैं, के कारण उन्नति नहीं कर सकते। इनमें से अधिकांशतः पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी होने के कारण बाल्यकाल के कुपोषण, सामाजिक अकेलेपन की भावना, कार्य करने की खराब आदतें तथा अपनी बौद्धिक क्षमताओं के प्रति आत्मविश्वास के अभाव के कारण समुचित विकास नहीं कर सकते। वे अपने को सामान्य धारा के छात्रों से सामंजस्य स्थापित करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। इन मनोवैज्ञानिक दबावों के कुप्रभाव को समाप्त करने के लिये तथा उनकी योग्यताओं में बढ़ोतरी करने हेतु एवं समाज की प्रमुख धारा में उन्हें समन्वित करने के लिए विशेष कार्यक्रम की आवश्यकता है।”

शैक्षिक विषमताएँ निम्नलिखित हैं-

- 1) जिन स्थानों पर प्राथमिक, माध्यमिक या महाविद्यालय की शिक्षा देने वाली संस्थाएँ नहीं हैं, वहाँ के बच्चों को वैसा अवसर नहीं मिल पाता जैसा उन बच्चों को मिल पाता है जिनकी बस्तियों में ये संस्थाएँ उपलब्ध हैं।
- 2) इस देश के विभिन्न भागों में शैक्षिक विकासों में भारी असन्तुलन देखने को मिलता है- एक राज्य और दूसरे जिले के विकास में और भी बड़ा अन्तर मौजूद है और एक जिले तथा दूसरे जिले के विकास में और भी बड़ा अन्तर देखने को मिलता है।
- 3) शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक और कारण यह है कि जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गरीब है और बहुत थोड़ा भाग धनी। किसी शिक्षा-संस्था के समीप होते हुए भी गरीब परिवारों के बच्चों को वह अवसर नहीं मिलता, जो धनी परिवारों के बच्चों को मिल जाता है।

- 4) शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक और बड़ा दुःसाध्य रूप विद्यालयों तथा कॉलेजों के अपने-अपने भिन्न स्तरों के कारण पैदा होता है। जब किसी विश्वविद्यालय या वृत्तिक कॉलेज जैसी संस्था में प्रवेश उन अंकों के आधार पर दिया जाता है, जो माध्यमिक स्तर की समाप्ति पर दी गयी सार्वजनिक परीक्षा में प्राप्त हुए हों और प्रवेश साधारणतया इसी आधार पर होता है तब देहाती क्षेत्र के साधनहीन ग्रामीण विद्यालय में पढ़े छात्र के लिए यह कसौटी या मापदण्ड एक समान नहीं रहता।
- 5) घरेलू पर्यावरणों के भिन्न-भिन्न होने के कारण भी भारी विषमताएँ उत्पन्न होती हैं। देहात के घर या शहरी गन्दी बस्तियों में रहने वाले और अनपढ़ माता-पिता की सन्तान को शिक्षा पाने का वह अवसर नहीं मिलता, जो उच्चतर शिक्षा पाये हुए माता-पिता के साथ रहने वाले उनकी सन्तान को मिलता है।
- 6) भारतीय परिस्थितियों ने निम्नलिखित दो प्रकार की शैक्षिक विषमताओं को प्रमुख रूप से जन्म दिया है- (i) शिक्षा के सभी स्तरों पर तथा क्षेत्रों में लड़कियों की शिक्षा में भारी अन्तर। (ii) उन्नत वर्गों तथा पिछड़े वर्गों - अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के बीच शैक्षिक विकास का अन्तर।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में शैक्षिक विषमताओं का प्रभावी निरूपण किया है तथा उसमें निम्नलिखित क्रम में इन्हें वर्गीकृत किया है-

- 1) महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा।
- 2) अनुसूचित जातियों के लिए शिक्षा।
- 3) अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा।
- 4) शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए अन्य वर्ग और क्षेत्र अल्पसंख्यक विकलांग प्रोढ़ शिक्षा आदि।

समानता के अवसर के उन्नयन के उपाय

समानता के अवसरों के उन्नयन के उपाय निम्नलिखित प्रकार हैं-

1. शिक्षा आयोग (**Education Commission**) - “जीवन के अन्य सभी आदर्शों की भाँति शिक्षा के अवसरों की भी पूरी समता कायम करना सम्भवतः असाध्य ही है पर ऐसे आम मामलों में असली प्रश्न पूर्ण लक्ष्य की सिद्धि का नहीं होता, ज्वलन्त आस्था तथा हार्दिक प्रयासों का होता है। किसी भी अच्छी शिक्षा-प्रणाली में महत्वपूर्ण विषमताएँ पैदा करने वाले कारणों को पहचानने का और उन्हें या तो पूरी तरह दूर या कम से कम न्यूनतम कर देने के लिए उचित कदम उठाने का प्रयास निरन्तर होता रहना चाहिए।”

शिक्षा आयोग ने इन विसंगतियों के निदान हेतु निम्नलिखित उपाय बताये हैं।

- 1) प्राथमिक शिक्षा सभी विद्यालयों में निःशुल्क दी जानी चाहिए।
- 2) माध्यमिक शिक्षा को यथाशीघ्र निःशुल्क बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए।

- 3) आगामी दस वर्षों में उच्चतर माध्यमिक तथा विश्वविद्यालयी शिक्षा में फीसों के सम्बन्ध में प्रयास किया जाना चाहिए कि सभी गरजमन्द और योग्य छात्रों को निःशुल्क शिक्षा दी जा सके।
- 4) प्राथमिक स्तर पर पाठ्य-पुस्तकें और लेखन-सामग्री मुफ्त दी जानी चाहिए। विद्यालयों में नये भर्ती होने वाले बच्चों का स्कूल के समारोह में स्वागत किया जाना चाहिए। अन्य बच्चों को भी विद्यालय की वार्षिक परीक्षाओं का परिणाम घोषित होते ही अगले वर्ष की पुस्तकों का पूरा सैट दिया जाना चाहिए जिससे वे अवकाश के दिनों में अगले वर्ष की पढ़ाई कर सकें।
- 5) माध्यमिक विद्यालयों तथा उच्च शिक्षा की संस्थाओं में पुस्तक-बैंकों (Book-Banks) का कार्यक्रम विकसित किया जाना चाहिए।
- 6) प्रतिभाशाली छात्रों को पुस्तकें खरीदने के लिए अनुदान दिये जाने चाहिए।
- 7) शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर छात्रवृत्तियों का निम्नांकित कार्यक्रम लागू किया जाय-
 - (i) प्राथमिक स्तर पर इस बात के लिए कदम उठाये जाने चाहिए कि अवसर प्राथमिक स्तर की समाप्ति पर किसी भी होनहार बच्चों को आगे पढ़ाई जारी रखने से रूकना न पड़े और इस उद्देश्य से हर जरूरतमन्द बच्चे को पर्याप्त राशि की छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।
 - (ii) राज्य स्तर पर विभिन्न जिलों में शिक्षा के विकास के समकरण की नीति जान-बूझकर अपनायी जानी चाहिए।
 - (iii) राष्ट्रीय स्तर पर यह भारत सरकार की जिम्मेदारी समझी जानी चाहिए कि वह विभिन्न राज्यों में शिक्षा के विकास का समकरण करे। इसके लिए आवश्यक कार्यक्रम, जिनमें कम उन्नत राज्यों को विशेष सहायता देना शामिल है, विकसित किये जाने चाहिए।
- 8) लड़कियों के बारे में निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए-
 - (i) लड़कियों की शिक्षा को अगले कुछ वर्षों के लिए शिक्षा का एक बड़ा कार्यक्रम माना जाना चाहिए और उनमें आने वाली कठिनाइयों का सामना करने तथा पुरुषों एवं नारियों की शिक्षा के मौजूदा अन्तर को यथाशीघ्र कम करने के लिए साहसपूर्ण प्रयास किये जाने चाहिए।
 - (ii) केन्द्र में तथा लड़कियों की शिक्षा पर नजर रखने के लिए एक विशेष तन्त्र होना चाहिए। इस तन्त्र को चाहिए कि वह लड़कियों की शिक्षा के कार्यक्रमों के आयोजन तथा क्रियान्वयन में सरकारी तथा गैर-सरकारी प्रयासों को एक जगह लाये।
- 9) अनुसूचित जातियों की शिक्षा का मौजूदा कार्यक्रम जारी रहना चाहिए और उसका विकास भी किया जाना चाहिए।

10) अनुसूचित जातियों के बच्चों में निम्नांकित कार्यक्रमों पर ध्यान दिया जाना चाहिए-

- (i) विरल आबादी वाले क्षेत्रों में आश्रम-स्कूलों की स्थापना की जानी चाहिए।
- (ii) अध्यापकों को आदिम जातीय भाषाओं का ज्ञान अवश्य होना चाहिए।
- (iii) माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों, छात्रावासीय सुविधाओं तथा छात्रवृत्तियों का काफी विस्तार किया जाना चाहिए।
- (iv) उच्चतर शिक्षा में छात्रवृत्तियों का काफी विस्तार किया जाना चाहिए।
- (v) उच्चतर शिक्षा में छात्रवृत्तियों के कार्यक्रम का विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए।

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 के परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक अवसरों की प्राथमिकता राष्ट्रीय शिक्षा नीति के खण्ड 12 में जिसका शीर्षक 'भविष्य' में है कहा गया है-

“सबसे बड़ा काम है शैक्षिक पिरामिड की बुनियाद को सृष्टि बनाना, उस बुनियाद को जिसमें इस शताब्दी के अन्त तक लगभग 100 करोड़ लोग होंगे। यह सुनिश्चित करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि जो इस पिरामिड के शिखर पर हों, वे विश्व में सर्वोत्तम स्तर के हों। अतीत में इन दोनों छोरों को हमारी संस्कृति के मूल स्रोतों ने भली-भाँति सिंचित रखा लेकिन विदेशी आधिपत्य और प्रभाव के कारण इस प्रक्रिया में विकार पैदा हो गया। अब मानव संसाधन विकास का राष्ट्रव्यापी प्रयास पुनःशुरू होना चाहिए, जिसमें शिक्षा अपनी बहुमुखी भूमिका पूर्णरूप से निभाये।” इस महान् उद्देश्य की सम्प्राप्ति हेतु राष्ट्रीय शिक्षा नीति में समान शैक्षिक अवसरों को प्राथमिकता प्रदान करने के उद्देश्य से निम्नलिखित विशेष समूहों को संतुष्ट करने के लिये शैक्षिक कार्यक्रमों की प्रस्तावित रूपरेखा को क्रियान्वित करने की योजना प्रस्तुत की है-

विशेष समूहों को सन्तुष्ट करने के लिये शैक्षिक कार्यक्रम

विशेष समूहों के लिए वैधानिक शैक्षिक व्यवस्था अग्रलिखित प्रकार है-

- (1) महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा।
- (2) अनुसूचित जातियों की शिक्षा।
- (3) अनुसूचित जन जातियों की शिक्षा।
- (4) पिछड़े वर्गों की शिक्षा।
- (5) अल्पसंख्यकों की शिक्षा।
- (6) विकलांगों की शिक्षा।
- (7) प्रौढ़ शिक्षा।
- (8) गति निर्धारक विद्यालयों की स्थापना।
- (9) उच्च शिक्षा में समानता के अवसर।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के बाद शिक्षा के अवसरों में समानता हेतु किये गये प्रयास एवं उपलब्धियाँ

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में शिक्षा नीति कार्यक्रम को ठोस रूप में लागू करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की गई थी। इसके प्रमुख बिन्दु निम्नवत् हैं-

1. राष्ट्रीय शिक्षा (National Education)- राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली का अर्थ ऐसी व्यवस्था से है जिसके अन्तर्गत किसी जाति-पाँति, धर्म, लिंग, निवास के भेद के बिना एक निश्चित स्तर तक सभी छात्र तुलनात्मक कोटि की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सरकार पर्याप्त आर्थिक पोषित कार्यक्रमों को आरम्भ करेगी।

- (1) समन्वित बाल विकास सेवाएँ (Integrated Child Development Services)-
- (2) पूर्व-बाल्यावस्था (ई.सी.सी.ई) के संचालन के लिए स्वैच्छिक संगठनों की सहायता।
- (3) प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों (Primary Health Centre) तथा उपकेन्द्रों द्वारा मातृ एवं शिशु-कल्याण सेवाएँ।

इसमें भी पिछड़े वर्गों को प्राथमिकता प्रदान की गयी थी तथा पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के अंतर्गत अत्यन्त निर्धन शहरी झुग्गी-झोंपड़ी समुदाय, घरेलू मजदूर वर्ग, असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत मजदूर वर्ग, घुमक्कड़ मजदूर वर्ग, निर्माण कार्यों में लगे श्रमिक वर्ग आदिम जातियाँ, वर जनजातियाँ, दुर्गम क्षेत्रों के निवासी आदि के छोटे शिशुओं को प्राथमिकता प्रदान की जाती है।

प्राथमिक शिक्षा की सफलता के लिए भी शिक्षा के लोकव्यापीकरण (यू.ई.ई) की महत्वाकांक्षी योजना लागू की गयी है। जिसका सन् 2000 तक शत-प्रतिशत नामांकन लक्ष्य रखा गया था। इसकी सफलता सुनिश्चित करने के लिए सरल उत्तीर्ण योजना, आपरेशन ब्लैक बोर्ड, पिछड़े नौ राज्यों में चरणबद्ध क्रियान्वयन तथा विकेन्द्रीकरण एवं पुरस्कार प्रणालियाँ प्रारम्भ की गई हैं। स्कूलों में “मिड-डे मील” पौष्टिक आहार तथा अन्य भौतिक सुविधाएँ प्रदान करने की भरपूर चेष्टा की गयी है।

2. एक समान शैक्षिक संरचना (Uniform Educational Structure)- राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत सारे देश में एक ही प्रकार की शैक्षिक संरचना लागू करने की योजना प्रस्तुत की गयी। इस प्रकार 10+2+3 के शैक्षिक ढाँचे की समूचे राष्ट्र ने स्वीकार कर लिया है। प्रथम दस वर्ष का सामान्य विभाजन इस प्रकार लागू किया गया है- प्रथम 5 वर्ष का प्राथमिक स्तर, 3 वर्ष का उच्च प्राथमिक स्तर तथा 2 वर्ष का हाई स्कूल। राष्ट्र के अधिकांश राज्यों ने इसे वास्तविक रूप से स्वीकार कर लिया है। माध्यमिक स्तरों पर शिक्षा में आंशिक भेद होने के बावजूद भी उच्च स्तर की शिक्षा लगभग एक समान है। वर्ष 2001 से यह भी प्रयास किया जा रहा है कि सभी विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में समानता तथा एकरूपता हो।

इस शैक्षिक संरचना में एक समान अवसर जुटाने के दृष्टिकोण से निम्नलिखित प्रयास किये गये हैं-

(क) **नवोदय शालाओं की स्थापना** सातवीं योजना तक भारत सरकार ने प्रत्येक जिला स्तर पर एक नवोदय विद्यालय खोलने की इच्छा प्रकट की थी। ये विद्यालय इस आशय से खोले गये हैं जिससे ग्रामीण एवं निर्धन वर्ग के ग्रामीण माता-पिता के बुद्धिमान बालकों को उत्तम शिक्षा प्राप्त करने के पर्याप्त अवसर प्राप्त हो सकें। इन विद्यालयों में ग्रामीण छात्रों की संख्या लगभग 75 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के बालकों के लिए क्रमशः 15 एवं 7 प्रतिशत प्रवेश सुरक्षित किये गये हैं। इन्हें केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् से सम्बद्ध किया गया है। इस प्रकार भारत सरकार अब तक 500 करोड़ रूपयों से अधिक इस योजना पर व्यय कर चुकी है।

(ख) **माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का व्यावसायीकरण** सभी को समान व्यावसायिक अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से माध्यमिक शिक्षा को पूर्ण व्यावसायिकता से जोड़ने की रूपरेखा प्रस्तुत की गयी थी। इसके लिए निम्नलिखित संस्थानों का सुझाव प्रस्तुत किया गया था-

- (1) राज्य व्यावसायिक शिक्षा परिषद् (State Council of Vocational Education)
- (2) राज्य व्यावसायिक शिक्षा संस्थान (State Institute of Vocational Education)।
- (3) व्यावसायिक शिक्षा विभाग (Department of Vocational Education)।
- (4) जिला स्तरीय समन्वय समिति (District level Co-ordination Committee)।

3. **खुले विश्वविद्यालय की स्थापना** - उच्च शिक्षा के एक समान अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से सितम्बर, 1985 में केन्द्रीय इन्द्रा गौंधी मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित किया गया। इस विश्वविद्यालय को देश में दूरस्थ शिक्षा के समन्वय तथा इसके स्तर निर्धारण का कार्य सौंपा गया। सन् 1987-88 में इस विश्वविद्यालय में विभिन्न अभिनव पाठ्यक्रमों का प्रारम्भ किया गया तथा इन पाठ्यक्रमों का शिक्षण सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय के सहयोग से रेडियो एवं टी.वी.चैनलों पर व्यवस्थाएँ की गयीं।

4. **महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा** - महिला शिक्षा के क्षेत्र में समानता के अवसर जुटाने के लिए निम्नलिखित लक्ष्यों की घोषणा की गयी थी -

- (1) लड़कियों के लिए प्राथमिक शिक्षा का समयबद्ध, चरणबद्ध कार्यक्रम प्राथमिक स्तर तथा उच्च प्राथमिक स्तर तक।
 - (2) 15-35 आयु वर्ग में महिलाओं के लिए प्रौढ़ शिक्षा का समयबद्ध कार्यक्रम (लगभग 6.8 करोड़)।
 - (3) तकनीकी, व्यावसायिक तथा विद्यमान उभरती प्रौद्योगिकी की शिक्षा में महिलाओं के लिए समुचित अवसरों की वृद्धि करना।
 - (4) महिलाओं की समानता बढ़ाने वाले शैक्षणिक कार्य-कलापों की समीक्षा तथा पुर्नगठन।
- (क) **शिक्षा नीति में महिलाओं की शिक्षा हेतु प्रावधान**- शिक्षा नीति में महिला शिक्षा हेतु निम्नलिखित रणनीति घोषित की गयी है-

- (1) राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस बात की परिकल्पना की गई है कि शिक्षा को महिलाओं के स्तरों में मूल परिवर्तन के लिए अभिकर्ता के रूप में प्रयोग किया जायेगा।
- (2) महिलाओं को अधिकार दिलाने में शिक्षा सही मध्यस्थता वाली भूमिका का निर्वहन करेगी।
- (3) पाठ्य-पुस्तकों, पाठ्यचर्चा, शिक्षकों, निर्णयकर्ताओं तथा प्रशासकों के प्रशिक्षण एवं अभिनव तथा शिक्षा संस्थाओं के सक्रिय सहयोग से नये मूल्यों के विकास को बढ़ावा दिया जायेगा।
- (4) महिलाओं के अध्ययनों को विभिन्न पाठ्यक्रमों के रूप में प्रोन्नत किया जायेगा।
- (5) महिलाओं के विकास के लिए सक्रिय कार्यक्रम चलाने के लिए शैक्षिक संस्थानों को प्रोत्साहन दिया जायेगा।
- (6) औद्योगिक, तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रमों में महिलाओं की शिक्षा को व्यापक बनाया जायेगा।

(ख) **महिलाओं को सशक्त बनाने हेतु शैक्षिक उपाय** - इस उद्देश्य की सम्प्राप्ति हेतु निम्नलिखित उपायों की उद्घोषणा की गयी है-

- (1) प्रत्येक शिक्षा संस्थान में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करने, जाग्रति पैदा करने तथा महिलाओं में सम्प्रेषण एवं संगठन की प्रोन्नति एवं विकास के लिए सक्रिय कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया जाना चाहिए।
- (2) प्रौढ़ एवं अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रमों में महिला शिक्षिकाओं तथा महिला अनुदेशकों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे महिलाओं की समानता के लिए सक्रिय भूमिका का निर्वहन कर सकें।
- (3) अनुसन्धान संस्थाओं, स्वैच्छिक संस्थाओं एवं कलाकारों द्वारा महिलाओं में चेतना उत्पन्न करने, अपने व्यक्तित्व को उन्नत करने के लिए विशेष कार्यक्रम तैयार किये जाने चाहिए।
- (4) स्कूल स्तर तक शिक्षकों की भर्ती के लिए महिलाओं को वरीयता दी जानी चाहिए।
- (5) सामान्य कोर पाठ्यचर्चा महिलाओं की नयी स्थिति के अनुरूप मूल्यों के संस्थापन के लिए तथा उनकी शक्ति बढ़ाने के लिए एक शक्तिशाली साधन है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) में महिला प्रकोष्ठ की पुनःस्थापना की जायेगी।

- (6) एन.सी.ई.आर.टी. और राज्य स्तर की एजेन्सियों द्वारा आरम्भिक प्रशिक्षण, सेवाकालीन प्रशिक्षण और पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों से अध्यापकों, प्रशिक्षकों, आयोजकों और प्रशासकों को महिला मामलों में संवेदनशील बनाया जाय।

(ग) लड़कियों के लिए शिक्षा का लोकव्यापीकरण तथा स्त्री तथा प्रौढ़ शिक्षा

कार्यक्रम- लड़कियों के लिए शिक्षा का लोकव्यापीकरण तथा स्त्री एवं प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम में निम्नलिखित प्रावधान है-

- (1) ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों को भाई-बहिनों और घर की देखभाल करने, ईंधन, चारा एवं पानी लाने अथवा दिहाड़ी मजदूरी में व्यस्त रखा जाता है। इसलिए नीति सन्दर्भित विशेष समर्थन सेवा में इन सभी क्षेत्रों को सम्मिलित करने की आवश्यकता है।
- (2) शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए मन्त्रालय एवं सम्बद्ध सामाजिक संगठन द्वारा पीने का पानी उपलब्ध कराने, मध्याह्न भोजन और अन्य स्त्रियों के जीवन से नीरसता समाप्त करने के कार्यक्रम लागू किये जायें।
- (3) स्कूल में लड़कियों का दाखिला बढ़ाने और उन्हें स्कूल में बनाये रखने में शिशु शिक्षा केन्द्र महत्वपूर्ण सहायक सेवा के रूप में हैं, अतः उन्हें बढ़ावा दिया जाय।
- (4) ग्रामीण अथवा स्थानीय क्षेत्रों में रोजगार अथवा कार्य के अवसरों से जुड़े शिल्पों के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की आवश्यकता है ताकि लड़कियों को पढ़ाने के लिए माता-पिता को प्रोत्साहन मिल सके।
- (5) लड़कियों में निरक्षरता समाप्त करने के लिए उनमें 15-35 आयु वर्ग हेतु प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम बड़े पैमाने पर तैयार किये जाने चाहिए क्योंकि इस आयु वर्ग की अधिकांश महिलाएँ काम करती हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि स्त्रियों के लिए प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किया जाय, जो उनकी कार्यकुशलता तथा आय पैदा करने वाले कार्यकलापों को बढ़ाने से सम्बद्ध हो।
- (6) कौशल निर्माण तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण में पालीटेक्नीक, सामुदायिक तकनीकी, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों, श्रमिक विद्यापीठों, केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, स्वैच्छिक संगठनों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि और गृह-विज्ञान कॉलेजों में, महिला केन्द्रों जैसे संगठनों तथा संस्थाओं द्वारा पर्याप्त सहायता प्रदान की जाय।
- (7) स्कूल स्तर पर अध्यापकों की भर्ती में महिलाओं को प्राथमिकता प्रदान की जाय।
- (8) स्कूल शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर कार्यानुभव एवं व्यावसायीकरण के एक भाग के रूप में लड़कियों को विभिन्न प्रकार की गतिविधियों से अवगत कराया जाना चाहिए।

5. अल्पसंख्यकों की शिक्षा (Education of Minorities) – भारतीय संविधान की धारा - 29 एवं 30 में अल्पसंख्यकों की भाषा, लिपि एवं संस्कृति को सुरक्षित रखने तथा अपनी संस्थाएँ,

धर्म अथवा भाषा पर आधारित शिक्षा संस्थाएँ स्थापित और संचालित करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

संविधान की धारा-30 में शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना करने और संचालित करने के लिए अल्पसंख्यकों को निम्नलिखित अधिकार प्रदान किये गये हैं-

- (1) सभी अल्पसंख्यक, चाहे वह धर्म या भाषा पर आधारित हों उन्हें अपनी इच्छानुसार शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना करने तथा उसका संचालन करने का अधिकार होगा।
- (2) कोई राज्य, शैक्षिक संस्थाओं को सहायता देने में किसी शैक्षिक संस्था के प्रति इस आधार पर भेदभाव नहीं करेगा कि इसका प्रबन्ध अल्पसंख्यकों द्वारा किया जाता है, चाहे यह धर्म या भाषा पर आधारित हो।

इस प्रकार धारा 350 के अन्तर्गत अग्रलिखित प्राथमिकता प्रदान की गयी है-

“प्रत्येक राज्य और राज्य के अन्तर्गत स्थानीय अधिकारों का यह सतत् प्रयास होगा कि भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के बच्चों को प्राथमिक स्तर पर शिक्षा उनकी मातृभाषा में देने की पर्याप्त सुविधा प्रदान करे तथा राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश जारी करे जैसा वह ऐसी सुविधाओं के प्रावधानों को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक और उपयुक्त समझे।”

अल्पसंख्यकों की शिक्षा हेतु दीर्घकालिक कार्यक्रम- शिक्षा नीति में अल्पसंख्यकों की शिक्षा हेतु निम्नलिखित दीर्घकालिक कार्यक्रम की घोषणा की गयी है-

- परम्परागत स्कूलों में स्वैच्छिक आधार पर विज्ञान, गणित एवं अंग्रेजी शिक्षण प्रदान करने का प्रयास करना।
- जहाँ तक सम्भव हो इन स्कूलों और शैक्षिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यक प्रमुख आबादी वाले क्षेत्रों में शिशु-शिक्षा केन्द्रों की स्थापना करना।
- सामाजिक रूप से उपयोगी उत्पादक कार्यों को इन संस्थाओं में प्रारम्भ करना।
- शिक्षा-विभाग द्वारा सहायता हेतु एक केन्द्रीय योजना लागू करना।

(ख) प्राथमिक शिक्षा

- शैक्षिक सुविधाओं के सम्बन्ध में भाषायी अल्पसंख्यकों के आयुक्त द्वारा अपेक्षित सांख्यिकीय सूचना के समाकलन के लिए संस्थागत पद्धति का राज्य सरकारों द्वारा निर्माण करना।
- भाषायी अल्पसंख्यक अध्यापकों को पदों को स्वीकृति और नियुक्ति हेतु जिला कलेक्टर को अधिकार प्रदान करके विलम्ब को समाप्त करना।
- एन.सी.ई.आर.टी. एवं अन्य स्रोत केन्द्रों द्वारा विज्ञान, गणित एवं सामाजिक विज्ञानों, अंग्रेजी, तथा जीविका मार्ग-दर्शन में अल्पसंख्यक संस्थाओं के शिक्षकों के लिए एक सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्य का विस्तार करना।
- राज्य सरकारों द्वारा राष्ट्रीय एकता और त्रिभाषा सूत्र के कार्यान्वयन के लिए अल्पसंख्यक संस्थाओं में क्षेत्रीय भाषा के अध्यापकों की नियुक्ति की योजना प्रारम्भ करना।

- चूँकि शैक्षिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों में महिला साक्षरता और लड़कियों का नामांकन सबसे कम है। अतः लड़कियों के स्कूल खोलने, अध्यापिकाओं की नियुक्ति, लड़कियों के छात्रावास खोलने तथा मध्याह्न भोजन, वर्दी आदि की सुविधाएँ प्रदान करने की योजनाओं में अल्पसंख्यकों की आवश्यकताएँ पूरी करना।
- राज्य सरकारों द्वारा शिल्प का उत्पादन एवं प्रशिक्षण केन्द्र खोलने के लिए महिला शिक्षकों को वरीयता प्रदान की जाय।

6. अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों की शिक्षा

शिक्षा नीति (1986) में इन समुदायों की शिक्षा को प्रभावी ढंग से उन्नत बनाने की बात कही गयी थी जिसकी पूर्ति हेतु इन लोगों के शैक्षिक विकास के योजनाबद्ध प्रयास किये गये। इस योजना के प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित थे-

- अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक विकास का प्रमुख लक्ष्य है- उनका शिक्षा के सभी स्तरों पर गैर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के साथ बराबरी के प्रयास करना।
- अनुसूचित जाति/जनजाति के 6-11 आयु वर्ग के सभी बच्चों का स्कूल में प्रवेश की व्यवस्था करना तथा उन्हें कक्षा 8 तक विद्यालय में रोके रखने के प्रयास करना ताकि वे अपनी पढ़ाई सन्तोषप्रद ढंग से पूरी कर सकें।
- 11-14 आयु वर्गों के बालकों में कम से कम 75 प्रतिशत को स्कूल में प्रवेश की व्यवस्था करना तथा उन्हें कक्षा 8 तक विद्यालय में रोके रखने के प्रयास करना ताकि वे अपनी पढ़ाई सन्तोषप्रद ढंग से पूरी कर सकें।

इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित उपाय किये गये हैं-

- (1) निर्धन परिवार के छात्रों को छात्रवृत्ति, भोजन, वस्त्र आदि प्रदान करना।
- (2) बालकों को छात्रवृत्ति का मासिक रूप से ठीक समय पर भुगतान करना।
- (3) पोस्ट मैट्रिक ऋण छात्रवृत्तियाँ प्रदान करना।
- (4) यूनीफार्म, लेखन-सामग्री, पुस्तकें आदि की सहायता प्रदान करना।
- (5) सफाई, चर्म शोधन जैसे व्यवसायों में व्यस्त माता-पिता के बालकों को अतिरिक्त आर्थिक सहायता प्रदान करना।
- (6) शिक्षकों, अभिभावकों, स्थानीय नेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि के द्वारा बालकों को तथा उनके माता-पिताओं को शिक्षा के प्रति अभिप्रेरित करना।
- (7) अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के शिक्षकों को ऐसे विद्यालयों में भर्ती करना।
- (8) इन विद्यालयों में विभिन्न व्यवसायों का प्रशिक्षण प्रदान करना।
- (9) आदिवासी क्षेत्रों में 'आश्रम स्कूलों' की स्थापना करना।

(10) दूरस्थ एवं दुर्गम क्षेत्रों, द्वीपों, पहाड़ियों, रेगिस्तानी क्षेत्रों में प्रभावती शिक्षा हेतु कार्य योजनाएँ लागू करना।

7. विकलांगों के लिए शिक्षा - राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1983-85) ने कहा है- “नेत्रहीन तथा बधिर बच्चों का अधिक से अधिक 5 प्रतिशत तथा मानसिक रूप से अविकसित का 0.50 प्रतिशत ही अनुमानतः लगभग 800-1000 विशेष स्कूलों में हैं। इनमें से अधिकांश स्कूल महानगरों तथा अन्य शहरी केन्द्रों में स्थित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ इन बच्चों का लगभग 80 प्रतिशत है, शैक्षिक सुविधाएँ न के बराबर हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया है कि ‘विकलांग बच्चों की शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वे पूरे समाज के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चल सकें। उनकी उन्नति भी आम आदमी की तरह हो।’

इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित प्रयास किए जा रहे हैं-

- (1) शिक्षकों के लिए सेवाकालिक प्रशिक्षणों की व्यवस्था।
- (2) राज्य शैक्षिक अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण परिषद् (SCERT) जैसी संस्थाओं को विशेष संसाधन एवं सुविधाएँ प्रदान करना।
- (3) विकलांग बालकों के अनुरूप पाठ्यक्रमों का आयोजन करना।
- (4) श्रम मन्त्रालय की मदद से विकलांगों के लिए औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना करना।
- (5) विकलांग बालकों को निम्नलिखित प्रोत्साहन रखे गये-
 - (अ) पचास प्रतिशत की परिवहिन भत्ते में छूट।
 - (ब) ग्रामीण क्षेत्रों में 10 विकलांग बालकों के समूह के अनुसार एक स्कूल रिक्शा खरीदने की व्यवस्था।
 - (स) ग्रामीण स्कूलों के भवनों को विकलांग बालकों के अनुरूप तैयार करना।
 - (द) इन्हें निःशुल्क पाठ्य-पुस्तकें, यूनिफार्म आदि प्रदान करना।
 - (य) शिशु केन्द्रों में इन बालकों को आगामी शिक्षा हेतु तैयार करना।

इनके अतिरिक्त राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में एक रूपता लाने के उद्देश्य से निम्नलिखित व्यवस्था प्रस्तुत की है- “राष्ट्रीय शिक्षा व्यवस्था पूरे देश के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षाक्रम के ढाँचे पर आधारित होगी जिसमें एक सामान्य केन्द्रिक (Common Core) होगा तथा अन्य हिस्सों की बाबत लचीलापन रहेगा, जिन्हें स्थानीय पर्यावरण तथा परिवेश के अनुसार ढाला जा सकेगा। “सामान्य केन्द्रिक” में भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास संवैधानिक जिम्मेदारियाँ तथा राष्ट्रीय अस्मिता से सम्बन्धित अनिवार्य तत्त्व शामिल होंगे। ये मुद्दे किसी एक विषय का हिस्सा न होकर लगभग सभी विषयों में पिरोये जायेंगे। इनके द्वारा राष्ट्रीय मूल्यों को हर इन्सान की सोच और जिन्दगी का हिस्सा बनाने की कोशिश की जायेगी। इन राष्ट्रीय मूल्यों में ये बातें शामिल हैं - हमारी समान सांस्कृतिक धरोहर, लोकतन्त्र, धर्मनिरपेक्षता, स्त्री-पुरुषों के बीच समानता, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक समता, सीमित परिवार का महत्व और वैज्ञानिक तरीके के

अमल की जरूरत। यह सुनिश्चित किया जायेगा कि सभी शैक्षिक कार्यक्रम धर्म निरपेक्षता के मूल्यों के अनुरूप ही आयोजित हों।

बोध प्रश्न:

1. लिंग पर आधारित असमानता तथा जातिगत असमानता के मुख्य बिन्दुओं का उल्लेख कीजिये ?

.....

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में शैक्षिक विषमताओं का निरूपण किस क्रम में किया गया है ?

.....

3. शिक्षा आयोग के अनुसार समानता के अवसर के उन्नयन में लड़कियों के बारे में किन बातों का ध्यान दिया जाना चाहिए ?

.....

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986के परिप्रेक्ष्य में विशेष समूहों के लिए शैक्षिक व्यवस्था किस प्रकार है ?

.....

3.7 शालेय शिक्षा में समाजशास्त्रीय विश्लेषण और गुणवत्ता एवं समता

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य की एक जन्मजात स्वाभाविक प्रवृत्ति सामाजिकता है। व्यक्तियों के समूह या संगठन को ही समाज कहते हैं। समाज व्यक्तियों के पारस्परिक संगठन का परिणाम होता है। समाज शास्त्रियों के अनुसार दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य पारस्परिक जागरूकता समानता व भिन्नता सहयोग व संघर्ष तथा अन्योन्याश्रित संबंधों के जाल को समाज कहा जाता है। प्रत्येक समाज सदैव क्रियाशील रहता है। प्रगतिशील समाज अपने अतीत के अनुभवों से प्रेरणा लेकर वर्तमान को सुधारने के लिये संघर्षशील रहता है जिससे उसका भविष्य उज्ज्वल हो सके। समाज अपनी आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं की पूर्ति शिक्षा के द्वारा करता है। समाजशास्त्रियों के द्वारा शिक्षा को एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया स्वीकार किया गया है जिसके द्वारा समाज अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये तथा प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने हेतु नागरिकों में ऐसे विचारों को प्रस्कृत करता है जो समाज में विभिन्न प्रकार के वांछित परिवर्तन लाने में सहायक हो सके।

- **समाज में शिक्षा की भूमिका**

व्यक्ति अपने समाज की भाषा, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाजों, मूल्यों, स्पष्ट, आदर्शों, मान्यताओं, विश्वासों, परम्पराओं आदि की जानकारी शिक्षा के द्वारा ही करता है यही कारण है कि समाज के नवागंतुक सदस्यों को सामाजिक स्वरूप का ज्ञान तथा चेतना प्रदान करने के लिए सभी सभ्य समाज शिक्षा की व्यवस्था करते हैं। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य का मानसिक विकास होता है तथा वह अपने सम्बन्ध में, अपने समाज के सम्बन्ध में, अपने राष्ट्र के सम्बन्ध में और सम्पूर्ण विश्व के सम्बन्ध में चिन्तन करने योग्य बनता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि शिक्षा के द्वारा सामाजिक परिवर्तन हुए हैं, हो रहे हैं तथा भविष्य में भी होते रहेंगे। किसी और देश की बात रहने देजिए, अपने देश की ही बात करें। बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का अशोक महान पर क्या प्रभाव पड़ा, इससे हम सभी परिचित हैं। मुगलों ने भी अपने शासन को सुदृढ़ बनाने हेतु भारतीय समाज को अपने अनुकूल परिवर्तन करने के कार्य में शिक्षा का ही उपयोग किया। अंग्रेजों ने पढ़े लिखे बाबू तैयार करने के लिए शिक्षा का प्रावधान किया। अंग्रेज भारतीयों के दृष्टिकोण में भारी परिवर्तन किये जिसके परिणामस्वरूप तत्कालीन भारतीय समाज में अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तन आए। धार्मिक अंधविश्वासों तथा जातीय संकीर्णता की भावना को इसी शिक्षा के द्वारा अनेक सामाजिक परिवर्तनों को लाने में सफलता मिली। नारियों की स्थिति में सुधार लाने, छुआ-छूत को समाप्त करने तथा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने में शिक्षा ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

कोठरी आयोग (1964-66) ने अपने प्रतिवेदन में कहा है कि - “उचित शिक्षा ही ऐसा साधन है जो राष्ट्रीय विकास में सहायक हो सकती है।” कोठरी आयोग ने यह भी कहा है कि “इतिहास में अनेक ऐसे मामले मिलते हैं जिनमें शिक्षा के माध्यम से किसी प्रणाली में सामाजिक और सांस्कृतिक क्रान्ति लाई गई है। राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिए शिक्षा का सोद्देश्य प्रयोग किया जाता है।”

भारत सरकार द्वारा 1985 में जारी **“शिक्षा की चुनौती: नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य”** में भी कहा गया है कि -

“मानव के इतिहास में शिक्षा मानव समाज के विकास के लिए एक सतत् क्रिया और आधार रही है। मनोवृत्तियों, मूल्यों तथा ज्ञान व कौशल दोनों को ही क्षमताओं के विकास के माध्यम से शिक्षा लोगों की बदलती परिस्थितियों के अनुरूप बनाने के लिए उन्हें शक्ति और लचीलापन प्रदान करती है, सामाजिक विकास के लिए प्रेरित करता है तथा उसमें योगदान देने के योग्य बनाती है।

निःसंदेह इतिहास से ज्ञात होता है कि राष्ट्रों के विकास में मानव संसाधनों द्वारा अदा की गई भूमिकाएँ महत्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं।”

यद्यपि स्वतन्त्रता के उपरान्त भारतीय समाज में अनेक सुखद परिवर्तन आए हैं, परन्तु वर्तमान भारतीय समाज पूर्णरूपेण दोषरहित नहीं है। हमारे समाज में अनेक बुराइयाँ अभी भी विद्यमान हैं। जातीयता, प्रान्तीयता, साम्प्रदायिकता, भाषायी अलगाव, धार्मिक उन्माद, आतंकवाद, नैतिक भाई-भतीजावाद, राजनैतिक भ्रष्टाचार, हड़ताल, तालाबन्दी, दंगे जैसी अनेकानेक विकराल समस्याएँ हमारे सम्मुख खड़ी हुई हैं। इन समस्याओं के उत्पन्न होने तथा समाप्त न होने का प्रमुख कारण वास्तविक शिक्षा का अभाव है। सामाजिक प्रगति के लिए नवीन सामाजिक प्रतिमानों के विकास की आवश्यकता है। स्वतन्त्रता के उपरान्त विगत वर्षों में शिक्षा में संख्यात्मक विकास तो काफी हुआ है परन्तु गुणात्मक दृष्टि से शिक्षा का ह्रास हुआ है। आजादी के बाद की परिस्थितियों में विभिन्न निहित स्वार्थों तथा राजनैतिक कारणों की वजह से शिक्षा की गुणात्मक उन्नति का मार्ग अवरुद्ध हो गया है। सरकारी दस्तावेजों में शैक्षिक आंकड़ों को बढ़ाचढ़ा कर दिखाने की प्रवृत्ति के कारण शिक्षा की गुणवत्ता की ओर ध्यान देने की आवश्यकता को कम करके आँका गया है। समाज में शिक्षा तथा शिक्षित व्यक्ति को सम्मानजनक स्थान देने की परम्परा भी धीरे-धीरे समाप्त हो गयी है। विदेशी ताकतों का दबाव बढ़ता जा रहा है, विदेशी कर्ज के भार से हम दबते जा रहे हैं तथा ऋण प्राप्ति के लिए हमें अपने स्वाभिमान को विश्व बैंक जैसी संस्थाओं में गिरवी रखना पड़ रहा है। समाज नैतिक पतन की खाई में गिरता जा रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम राष्ट्र के सभी कर्णधारों को ऐसी शिक्षा प्रदान करें कि वे एक आदर्श, प्रगतिशील, आत्मनिर्भर तथा नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण, सौहार्द की भावना से ओतप्रोत, राष्ट्र गौरव के संकल्प से युक्त एक स्वाभिमानी समाज की रचना करने में सक्षम हो सकें। एक ऐसे समाज की स्थापना करना हम सभी देशवासियों का उद्देश्य होना चाहिए जो विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में अग्रगण्य हो, जिसमें सुख-सुविधाओं के वितरण में समानता हो, जिसमें सभी को समानाधिकार हो, तथा जिसके नागरिक उच्च नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण हों।

हमें एक ऐसा समाज बनाना है जिसमें स्वास्थ्य, अवकाश, व्यवसाय तथा घरेलू जीवनचर्या के क्षेत्र में नवीन, आधुनिक जीवन-पद्धति को अपनाने के प्रति रुझान हो। यह कार्य नियोजित शिक्षा के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। शिक्षा का सहारा लेकर देश के नागरिकों में भावात्मक एकता, धार्मिक सहिष्णुता, राष्ट्रीय समाकलन, अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन की भावना को विकसित करना होगा जिससे पूर्वाग्रहों तथा भेदभाव से रहित एक ऐसा समाज तैयार हो सके जो अज्ञानता व रुढ़ियों से मुक्त हो, असुरक्षा व बेरोजगारी का नामोनिशान न हो तथा जिसके नागरिक जनहित में व्यक्तिगत हितों व स्वार्थों का त्याग करने के

लिए तत्पर हों। शिक्षा ही व्यक्ति को अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों का बोध कराती है। शिक्षित व्यक्ति ही अपने कर्तव्यों को ठीक ढंग से समझकर उनका स्वेच्छा से पालन करते हैं। शिक्षित व्यक्ति ही अपने अधिकारों के प्रति सचेत रहते हैं। शिक्षा व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र की समता, आर्थिक उन्नति, खुशहाली तथा समृद्धि लाने की दिशा में अत्यंत सार्थक भूमिका अदा कर सकती है।

- **भारतीय सामाजिक व्यवस्था में विद्यालय का स्थान**

भारतीय समाज में विद्यालय की भूमिका एवं उसके औचित्य को निम्नांकित बिन्दुओं में व्यक्त कर सकते हैं-

- समाजोपयोगी नागरिकों के निर्माण हेतु
- जनतांत्रिक समाज-व्यवस्था हेतु
- सांस्कृतिक परम्परा का संरक्षण एवं हस्तान्तरण हेतु
- सामाजिक परिवर्तन में सहायक बनने हेतु
- राष्ट्रीय भावात्मक एकता की अभिवृत्ति के विकास हेतु
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास हेतु
- शिक्षा को उत्पादकता से सम्बद्ध करने हेतु

उपरोक्त बिन्दु समाज में विद्यालय द्वारा सार्थक स्थान बनाये रखने एवं अपने अस्तित्व के औचित्य को सिद्ध करने के परिप्रेक्ष्य में उल्लेखनीय हैं जिनका समर्थन कोठारी आयोग ने किया है तथा जिन्हें भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्रमुखता दी गई है।

- **गुणवत्ता (Quality)**

किसी भी क्षेत्र के निर्धारित कार्य के लक्ष्यों को प्राप्त करना तथा सामाजिक समरसता स्थापित करना गुणवत्ता (Quality) कहलाता है। शिक्षा का दायित्व है कि बच्चों में विषयगत दक्षताओं के विकास के साथ-साथ धर्म निरपेक्षता, लोकतंत्र, बंधुत्व, न्याय, एकता, देशभक्ति, मानव अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति सम्मान की भावना विकसित करें। गुणवत्ता शिक्षा का आधार 'समानता सहित गुणवत्ता है जिसमें बालक, शिक्षक और उसकी समस्त प्रक्रियाओं का गुणात्मक विकास समाहित है। गुणात्मक शिक्षा के लिये आवश्यक हैं कि-

- सभी बच्चे पुस्तक के पाठों को समझकर सीख रहे हों।

- बांछित दक्षता प्रगति कर रहे हों।
- बच्चे बिना डरे अपनी बात शिक्षक से कह सकते हों।

सभी बच्चों की गुणवत्तापूर्ण उपलब्धियों से तात्पर्य शिक्षण द्वारा उनमें व समस्त दक्षताएँ और कौशल उत्पन्न हों जो किसी विशेष स्तर के लिए पाठ्यक्रम में निर्देशित किए गए हैं।

● समता (Equity)

राष्ट्रीय आवश्यकताओं के सन्दर्भ में शैक्षिक अवसरों की समता का अभिप्राय है- राष्ट्र की शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरूप प्रत्येक क्षेत्र में उपयुक्त एवं पर्याप्त मात्रा में शैक्षिक अवसर प्राप्त होने चाहिए जिससे राष्ट्र को अपनी सभी आवश्यकताओं के लिए शिक्षा प्राप्त व्यक्ति उपलब्ध हो सके और प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित होकर राष्ट्र की उन्नति में सहायक हा सके तथा जनतांत्रिक मूल्यों की रक्षा कर सके।

शिक्षा आयोग (1964-66) के अनुसार, शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं अवसर की **समता** प्रदान करना, जिससे पिछड़े तथा दलित वर्ग और व्यक्ति शिक्षा के द्वारा अपनी स्थिति सुधार सकें। जो भी समाज समाजिक न्याय को अत्यन्त आदर्श मानता है और साधारण की हालत सुधारने तथा समस्त शिक्षा पाने योग्य व्यक्तियों को शिक्षित करने को उत्सुक है, उसे यह व्यवस्था करनी ही होगी कि जनता के सब वर्गों को अवसर की **समता** प्राप्त होती जाय। एक समतामूलक तथा मानवतामूलक समाज जिसमें निर्बल का शोषण कम से कम हो, बनाने का शिक्षा ही एक सुनिश्चित साधन है।

बोध प्रश्न:

1. भारत सरकार द्वारा 1985 में जारी शिक्षा की चुनौती में क्या कहा गया है ?

.....

2. समाजशास्त्रियों के अनुसार समाज किसे कहा जाता है ?

.....

3. हमारे समाज में कौन-कौन सी बुराईया विद्वान है ?

.....

4. हमें कैसा समाज बनाने की आवश्यकता है ?

.....

5. समता का आशय अपने शब्दों में स्पष्ट करें ?

.....

सारांश

भारत में स्वतंत्रता के पश्चात जनतंत्रीय शासन व्यवस्था लागू की गई। जनतंत्रीय शिक्षा व्यवस्था के तहत यह प्रयास किया जा रहा है कि सभी वर्ग के लोग समान रूप से शिक्षित हो तथा देश की समृद्धि एवं विकास में सहयोग दे सकें। शासन प्रयास रत है कि जन-जन तक शिक्षा पहुंचे और सभी व्यक्ति गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्राप्त करें। इसके लिए शिक्षा का लोकव्यापीकरण किया जा रहा है जिससे शिक्षा सभी वर्गों तक पहुंच सके। सभी वर्गों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान किये जा रहे हैं तथा शैक्षिक अवसरों की असमानता को निरन्तर दूर किया जा रहा है। शिक्षा में समता व गुणवत्ता पर ध्यान देते हुए सभी बच्चों को उनकी क्षमता एवं प्रतिभा के अनुसार शिक्षा के अवसर प्रदान कर समाज को समृद्ध बनाया जा रहा है जिससे शिक्षित व्यक्ति जनतंत्र का मूल्य समझ सकें और देश के प्रजातांत्रिक मूल्यों की रक्षा कर सकें।

अभ्यास कार्य

- अब्राहम लिंकन के अनुसार जनतंत्र क्या है ? समझाइये।
- जनतंत्रीय शिक्षा के महत्व की वर्तमान सन्दर्भ में विवेचना कीजिए।

- “जनतन्त्रीय शिक्षा का उद्देश्य जनसाधारण के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना है।” इस कथन की व्याख्या कीजिये।
- जनतंत्र में गुणात्मक शिक्षा के लिए शिक्षक का क्या स्थान होना चाहिए।
- शालेय शिक्षा के लोकव्यापीकरण की विवेचना कीजिए।
- छात्रों को निर्धारित अवधि तक विद्यालयों में बनाये रखने के लिए हमें कौन-कौन से प्रयास करने चाहिये।
- लोकव्यापीकरण के शतप्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए वर्तमान सन्दर्भ में हमें कौन-कौन से प्रयास करने चाहिए।
- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक अवसरों की समानता का अर्थ समझाइये।
- शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए संवैधानिक प्रावधानों की विवेचना कीजिये।
- शैक्षिक अवसरों की समानता की आवश्यकता प्रतिपादित कीजिए।
- शालेय शिक्षा में बढ़ती असमानता को दूर करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) द्वारा किए गए प्रयासों का वर्णन कीजिए।
- शिक्षा आयोग द्वारा समानता के अवसर के उन्नयन हेतु कौन-कौन से उपाय सुझाए गए हैं ?
- समाज में शिक्षा की भूमिका प्रतिपादित कीजिए।
- गुणवत्ता एवं समता की वर्तमान संदर्भ में अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए।
- शालेय शिक्षा का अपने शब्दों में समाजशास्त्रीय विश्लेषण कीजिए।

3.8 चर्चा के बिन्दु

- आपकी राय से जनतन्त्रीय शिक्षा का स्वरूप कैसा होना चाहिए
- लोकव्यापीकरण के अन्तर्गत शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हेतु हमें कौन-कौन से प्रयास करना चाहिए।
- वर्तमान सन्दर्भ में, शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए संविधान में कौन से प्रावधान किए जाने की आवश्यकता है ?
- शालेय शिक्षा में बढ़ती असमानता को आज की स्थिति में पूर्ण रूप से समाप्त करने के लिए हमें क्या प्रयास करना चाहिये ?
- समतामूलक समाज के निर्माण के लिए वर्तमान में किस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिये ?

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- शर्मा, आर.के. एवं अन्य (2005). भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास, आगरा-2, राधा प्रकाशन मन्दिर।
- बघेला, एच.एस.(1988). शिक्षा तथा भारतीय समाज, आगरा-4, हर प्रसाद भार्गव, 4/230, कचहरी घाट।
- त्यागी, जी.एस.डी. एवं पाठक, पी.डी.(1985). भारतीय शिक्षा की समसामयिक समस्याएँ, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।
- त्यागी, जी.एस.डी. एवं पाठक, पी.डी.(2013). भारतीय शिक्षा की सम-सामयिक समस्याएँ, आगरा-2, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर।

